छंद शतक

रचयिता :

कविवर वृन्दावनदास

प्रकाशक :

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान

हस्तिनापुर, मेरठ (उ० प्र०)

Scanned by CamScanner

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला का पुष्प नं० ११२

छन्द शतक

श्री वृन्दावन कवि विरचित

प्रकाशक :

दि० जैन त्रिलोक शोध संस्थान

हस्तिनापुर [मेरठ] उ० प्र०

वीर निर्वाण सं० २५१६

प्रथम संस्करण | कार्तिक शुक्ला १ | मूल्य
११०० प्रति | ३० अक्टूबर १९८९ | ४)००

Scanned by CamScanner

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा संचालित

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमाला में दिगम्बर जैन आर्षमार्ग का पोषण करने वाले
हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, कन्नड, मराठी आदि भाषाओं के
न्याय, सिद्धान्त, अध्यात्म, भूगोल-खगोल, व्याकरण
आदि विषयों पर लघु एवं वृहद् ग्रन्थों का मूल
एवं अनुवाद सहित प्रकाशन होता है।
समय-समय पर धार्मिक लोकोपयोगी
लघु पुस्तिकायें भी प्रकाशित
होती रहती हैं।

संस्थापिका एवं प्रेरणा
परम पूज्य १०५ गणिनी
आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी

समायोजन :
आर्यिका चंदनामती माताजी

निदेशक—स्वस्ति पीठाधीश क्षुल्लक श्री मोतीसागर जी

संपादक :
ब्र० रवीन्द्र कुमार बी० ए० शास्त्री

मुद्रक : भारतीय प्रेस, ३०० स्वामीपाड़ा, मेरठ-२५०००२

Scanned by CamScanner

विषय दर्पण

[छंद शतक]

क्रम	विषय	पृष्ठ
१.	मंगलाचरण	१
२.	रचयिता का प्रारंभिक निवेदन	१
३.	आठों गणों के नाम, स्वामी, फल, लक्षण	२
४.	चार्ट आठों गणों के नाम आदि	३
५.	गणों के विषय में विचार	४
६.	रचयिता की प्रतिज्ञा	४
७.	आठ गणों के आठ छन्द	५

[छंद प्रकरण]

८.	वर्णिक छंद निरूपण	७
९.	मात्रिक छंद निरूपण	१७
१०.	गाथा प्रकरणाष्टक	१७
११.	दोहा, सोरठा आदि	१९
१२.	गीता प्रकरण सप्तक	२६
१३.	वर्णिक सवैया सप्तक	२८
१४.	दण्डक प्रकरण	३०
१५.	अशोक पुष्प मंजरी, अनंग शेखर आदि	३०
१६.	कविवर वृंदावन का परिचय	३२
१७.	बुद्धिमानों से प्रार्थना, अंतिम मंगलाचरण	३३
१८.	परिशिष्ट में भिन्न-भिन्न छंदों के उदाहरण	३४

Scanned by CamScanner

प्रस्तावना

लेखिका-आर्यिका चन्दनामती

"छंद शतक" नाम की यह लघु पुस्तिका आपके समक्ष प्रस्तुत हो रही है। साहित्य रचना में जिस प्रकार रस, अलंकार, व्याकरण आदि आवश्यक अंग होते हैं उसी प्रकार "छंद" शास्त्र का भी साहित्य रचना में अपना महत्वपूर्ण स्थान है।

मुख्य रूप से सम्पूर्ण साहित्य दो भागों में पाया जाता है-एक गद्य रूप और दूसरा पद्य रूप। दोनों ही रचनाएं प्राचीन काल से चली आ रही हैं। पद्यात्मक रचना के पठन-पाठन में सुगमता होती है और संगीतमय मधुरता होने के कारण अशांत मन को भी उससे शांति की प्राप्ति होती है। इसीलिए आप देखिए इस पंचमकाल के सर्वज्ञ कहलाने वाले आचार्य श्री कुंद-कुंद देव ने भी समयसार आदि पाहुड़ ग्रन्थों की रचना पद्य में की है क्योंकि पद्य में जो भावों का संक्षिप्तीकरण हो सकता है वह गद्य में संभव नहीं है।

भाव लीजिए पद्य रचना भी हम कर लेवें किन्तु जब तक छन्द शास्त्र के नियमानुसार वह रचना पूर्ण व्यवस्थित न हो तब तक पाठकों को उसमें रसास्वादन नहीं प्राप्त हो सकता है। जैसे कोई स्त्री है, वह स्वभाव से शांत भी है और उसके व्यवहार में पर्याप्त मधुरता भी है जिससे हृदय में आनन्द का झरना सा प्रवाहित होता है, तथा उस स्त्री के सौंदर्य को निखारने के लिए अनेक प्रकार के आभूषण भी उसे पहनाए गए हैं किन्तु यदि उस स्त्री का शरीर ही बेडौल है, उसके अंगोपांग अव्यवस्थित हैं तो ये सुन्दर अलंकार भी उसे शोभित नहीं कर सकते। यही हाल कविता का है। कविता में पर्याप्त आनन्द देने की सामर्थ्य है, भावों की प्रचुरता भी है और अलंकारों का प्रयोग भी है किन्तु उसका स्वरूप छन्द शास्त्र के अनुसार न होकर यदि अव्यवस्थित है तो उसकी सुन्दरता हमें अपनी ओर आकर्षित नहीं कर सकती एवं शास्त्रीय संगीतमय आनन्द तो उससे प्राप्त ही नहीं हो सकता।

कविवर वृन्दावन जी द्वारा विरचित इस "छन्दशतक" में १०० प्रकार के छंदों का वर्णन है। हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप स्थल पर "आर्यिका श्रीज्ञानमती दिगम्बर जैन परीक्षालय" नाम से एक परीक्षा बोर्ड की स्थापना ३ वर्ष पूर्व हुई थी। उसमें कोर्स की पुस्तकों की प्रकाशन शृंखला में छन्द ज्ञान की पुस्तक का भी क्रम आया जो कि "विशारद" परीक्षा के प्रथम खण्ड में है। तब पू० माताजी ने कविवर वृन्दावन जी की इस "छन्दशतक" पुस्तक का निर्णय किया। उनको इस छन्दशास्त्र के प्रति

Scanned by CamScanner

इसलिए अधिक प्रीति हुई क्योंकि इस लघु पुस्तिका में विशेषता यह है कि छन्द के लक्षण में ही छन्द का नाम निहित है तथा उन लक्षण के पद्यों में जिनेन्द्र भगवान की स्तुति भी हो जाती है। इसीलिए अन्य छन्दशास्त्रों की अपेक्षा यह कृति अपने आप में अधिक रोचक और सरस प्रतीत हुई।

कविवर वृन्दावन जी का जन्म सं० १८४८ में बिहार प्रान्त में शाहाबाद जिले के "बारा" नामक ग्राम में हुआ था। आपके वंशज इस समय भी उस प्रान्त के आरा नगर में विद्यमान हैं।

पू० माता जी की सत्प्रेरणा एवं शुभाशीर्वाद से स्थापित दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान वर्तमान में निर्माण. साहित्यिक एवं सृजनात्मक कार्यों में सर्वाधिक अग्रणी है। जिसके माध्यम से सम्यग्ज्ञान हिन्दी मासिक, वीरज्ञानोदय ग्रन्थमाला, आचार्य श्री वीरसागर विद्यापीठ आदि कार्य चल रहे हैं। ग्रन्थमाला के द्वारा अब तक लाखों की संख्या में पू० ज्ञानमती माता जी द्वारा लिखित ग्रंथ प्रकाशित हो चुके हैं।

परीक्षा बोर्ड की आश्यकतानुसार अन्य साहित्य की जरूरत महसूस करते हुए कतिपय अन्य लेखकों का साहित्य भी प्रकाशित किया जा रहा है। इसी श्रृंखला में यह "छंदशतक" आपके समक्ष प्रस्तुत है आशा है धार्मिक परीक्षा देने वाले विद्यार्थियों को इससे लाभ प्राप्त होगा। □

Scanned by CamScanner

पूज्य गणिनी आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माता जी का परिचय

लेखिका–आर्यिका चन्दनामती

अवध प्रान्त के टिकैतनगर में सन् १९३४ में शरदपूर्णिमा की रात्रि में धरती पर एक चाँद अवतीर्ण हुआ। श्रेष्ठी धनकुमार जी के सुपुत्र श्री छोटेलाल जी की बगिया खिल उठी और श्रीमती मोहिनी देवी का प्रथम मातृत्व धन्य हो गया। कन्या के रूप में मानों कोई देवी ही वरदान बनकर आई थी। कन्या का नाम रखा गया–"मैना"।

संस्कारों का प्रभाव जीवन में बहुत महत्व रखता है। ११ वर्ष की उम्र में कुमारी मैना के जीवन पर अमिट छाप पड़ी–अकलंक निकलंक नाटक के एक दृश्य की। विवाह की चर्चा के समय जो बात अकलंक ने अपने माता-पिता से कही थी कि "कीचड़ में पैर रखकर धोने की अपेक्षा नहीं रखना ही श्रेयस्कर है।" तदनुसार मैना ने भी उसी क्षण आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत रखने का मन में संकल्प कर लिया था।

आर्यिका ज्ञानमती जी ने अपनी छोटी सी अवस्था में ही गुरु आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज के आशीर्वाद से महान् ज्ञानार्जन कर लिया। आचार्य श्री इन्हें हमेशा यही संबोधन दिया करते थे–माता जी। मैंने जो आपका नाम रखा है उसका ध्यान रखना। २ वर्ष पश्चात् गुरुदेव भी जयपुर खानिया में समाधिस्थ हो गये। आचार्य श्री की समाधि के पश्चात् लगभग ६ वर्ष तक आपने आ० शिवसागर जी महाराज के संघ में ही रहकर ध्यानाध्ययन किया अनंतर आचार्य श्री की आज्ञानुसार अपने आर्यिका संघ साहित सम्मेद शिखर, कलकत्ता तथा सम्पूर्ण दक्षिण भारत की यात्रा हेतु अलग विहार किया।

दीपक जिस प्रकार स्वयं जलकर भी दूसरों को प्रकाश करता है, चंदन विषधरों के द्वारा इसे डसे जाने पर भी सुगन्धि ही बिखेरता है। उसी प्रकार पूज्य ज्ञानमती माता जी ने सदैव परोपकार में ही अपने जीवन की सार्थकता मानी है।

जहाँ आपने कुमारी कन्याओं, सौभाग्यवती महिलाओं एवं विधवा महिलाओं को गृहस्थरूपी कीचड़ से निकालकर मोक्षमार्ग में लगाया है वहीं कई नवयुवक एवं प्रौढ़ पुरुषों को भी शिक्षा देकर त्याग के चरम शिखर पर पहुंचाया है। चारित्र-चक्रवर्ती आचार्य श्री शांति सागर जी महाराज के चतुर्थ पट्ट पर विराजमान आचार्य

Scanned by CamScanner

श्री अजितसागर जी महाराज वर्तमान में इसके जीते-जागते उदाहरण हैं। बाल ब्र० श्री राजमल जी को सन् १९५८--५९ में राजवार्तिक, गोम्मटसार कर्मकाण्ड, पंचाध्यायी आदि ग्रन्थों का अध्ययन कराया और दीक्षा की प्रेरणा देती रहीं उसी के फल-स्वरूप अपने अथक प्रयासों के बल पर आखिर एक दिन मुनि दीक्षा के लिए ज्ञानमती माताजी ने तैयार कर ही दिया और सन् १९६१ में सीकर (राज०) में आचार्य श्री शिवसागर जी महाराज ने उन्हें दीक्षा देकर मुनि अजित सागर बना दिया।

देखिए ! त्याग की विशेषता और मातृ हृदय की उदारता, आर्यिका श्री ज्ञानमती माता जी ने तत्क्षण ही उन्हें नमोस्तु करना प्रारम्भ कर दिया क्योंकि जैन धर्म में जिन लिंग-मुनिवेष सर्वाधिक पूज्य माना गया है।

परमपूज्य आचार्यकल्प श्री श्रुतसागरजी महाराज हमेशा कहा करते थे—

"पारस मणि तो लोहे को सोना बनाता है, पारस रूप नहीं बनाता किन्तु ज्ञानमती माताजी वह पारस हैं जो लोहे को सोना ही नहीं किन्तु पारस बना देती हैं। प्रत्युत "निजसम की बात तो जाने दो निज से महान कर देती हैं।"

साहित्यिक क्षेत्र—दृढ़ संकल्पी आत्मा का प्रत्येक कार्य अवश्यमेव सफल होता है। जिस प्रकार ज्ञानमती माता जी ने शिष्य निर्माण में अच्छी सफलता प्राप्त की है उसी प्रकार साहित्यिक निर्माण के क्षेत्र में इस युग में एक नया कीर्तिमान स्थापित किया।

इस प्रकार से ज्ञानमती माताजी ने अपने जीवन में साहित्यसृजन का नवीन कार्य प्रारम्भ किया है। उनके मार्ग का अनुसरण करते हुए आज तो कई आर्यिकाओं ने ग्रन्थ निर्माण की ओर अपने कदम बढ़ाए हैं जो नारी जाति के लिए गौरव का विषय है। एक कवि ने कहा भी है—

जो बतलाते नारी जीवन लगता मधुरस की लाली है।
वह त्याग तपस्या क्या जाने कोमल फूलों की डाली है॥
जो कहते योगों में नारी नर के समान कब होती है।
ऐसे लोगों को ज्ञानमती का जीवन एक चुनौती है॥

जम्बूद्वीप निर्माण एवं ज्ञानज्योति प्रवर्तन—

४ जून १९८२ को पू० माताजी की प्रेरणा से प्रधानमन्त्री श्रीमती इंदिरा-गाँधी ने दिल्ली के लालकिला मैदान से जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति का प्रवर्तन किया जिसके द्वारा १०४५ दिनों तक सम्पूर्ण भारत में जम्बूद्वीप एवं भगवान् महावीर के सिद्धांतों का खूब प्रचार हुआ तथा अन्त में २८ अप्रैल, १९८५ को हस्तिनापुर में समापन

Scanned by CamScanner

समारोह के साथ रक्षामन्त्री श्री पी० वी० नरसिंहराव एवं सांसद श्री जे० के० जैन ने यहीं पर उस ज्ञानज्योति की अखण्ड स्थापना की जो प्रत्येक आगंतुक नर-नारियों को अहर्निश ज्ञान का सन्देश प्रदान करती है।

इस प्रकार पू० गणिनी आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी की अति संक्षिप्त जीवन झाँकी मैंने प्रस्तुत की है आशा है कि हमारे पाठकगण उनके जीवनवृत्त से लाभ उठायेंगे तथा हस्तिनापुर पधार कर साक्षात् पू० माताजी के एवं उनकी अमरकृतियों के दर्शन कर धर्म लाभ प्राप्त करेंगे।

श्री वीर के समवसृति में चन्दना थीं।
गणिनी बनीं जिनचरण जगवन्दना थीं॥
गणिनी वही पदविभूषित को नमूँ मैं।
श्रीमती ज्ञानमती को नित ही नमूं मैं॥ □

Scanned by CamScanner

सिद्धान्त वाचस्पति, न्यायप्रभाकर चन्दनामती आर्यिकारत्न

श्री ज्ञानमती माताजी

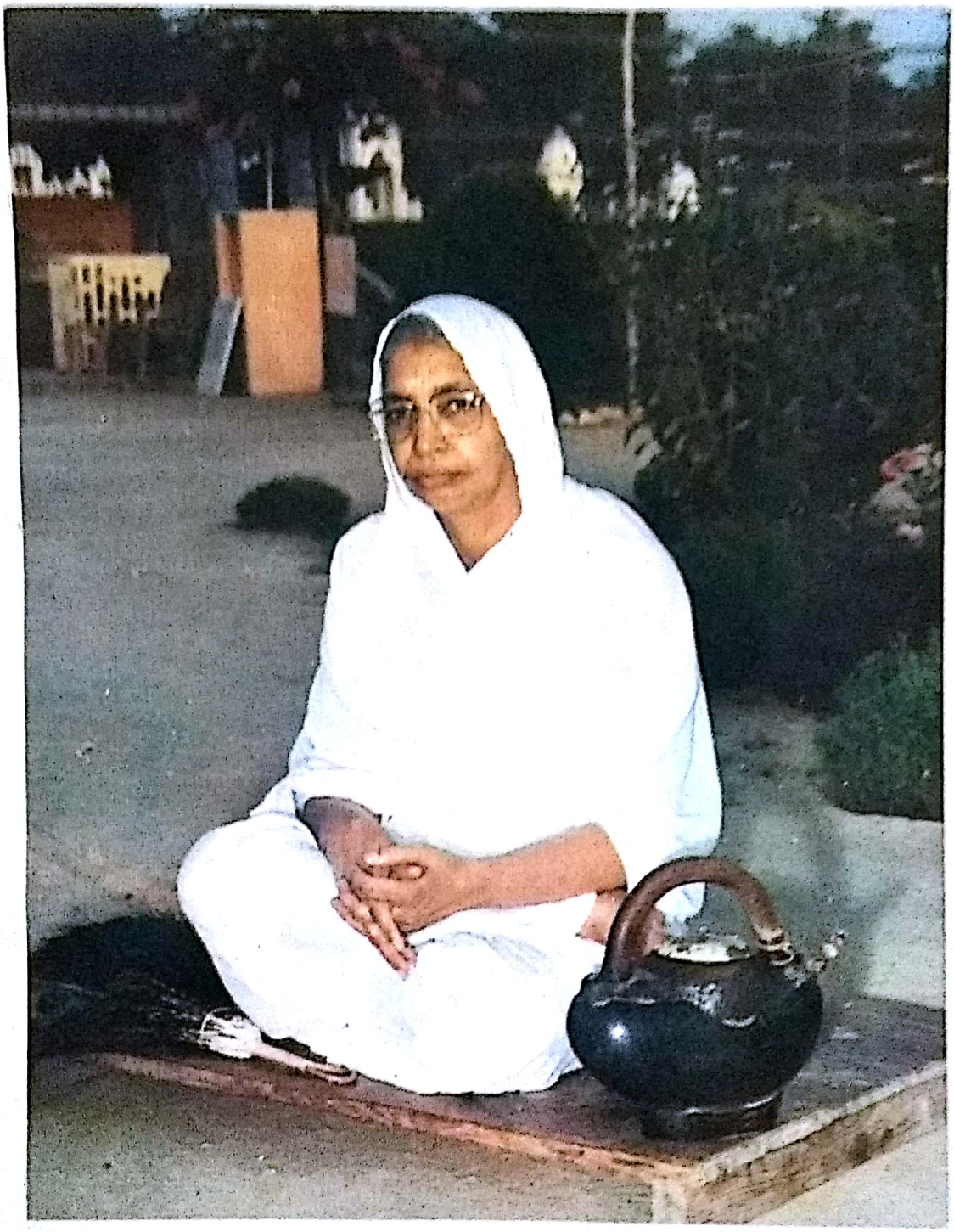

जन्म	क्षुल्लिका दीक्षा	आर्यिका दीक्षा
टिकैतनगर (बाराबंकी उ.प्र.)	आ० श्री देशभूषण जी से	आ० श्री वीरसागर जी से
सन् १९३४ वि. सं. १९९१	श्री महावीरजी में	मांधोराजपुरा (राज०) में
असोज शु. १५ (शरद पू०)	वि.सं. २००९ चैत्र कृ. १	सं. २०१३ वैशाख कृ. २

Scanned by CamScanner

॥ श्री वीतरागाय नमः ॥

छन्द-शतक

(कविवर वृन्दावनदासजी विरचित)

मङ्गलाचरण—

* दोहा *

वंदौं श्री सरवग्य पद, निरावरन निरदोष ।
विघन हरन मंगल करन, वांछितार्थ सुख पोष ॥१॥
सिद्ध सिरोमनि सिद्ध पद, वंदौं सिद्ध महेस ।
छंद सुखद रचना रचौं, मेटौ सकल कलेस ॥२॥
छंद महोदधि तैं लियौ, मति-भाजन मित काढ़ ।
लिखौं सु यह संक्षेप सौं, बाल-खयाल अवगाढ़ ॥३॥
छंदन को लक्षण लिखत, बढ़ै बड़ो विस्तार ।
तातैं कछु प्रस्तार लिखि, लिखौं छद सुखकार ॥४॥

रचयिता का प्रारम्भिक निवेदन—

लघु की रेखा सरल (।) है, गुरु की रेखा बंक (ऽ) ।
इहि क्रम सौं गुरु-लघु परखि, पढ़ियौ छंद निशंक ॥५॥
कहुँ-कहुँ सुकवि प्रबंध मंह, लघु को गुरु कहि देत ।
गुरु हूँ को लघु कहत हैं, समुझत सुकवि सुचेत ॥६॥

भावार्थ—हिन्दी छन्द-शास्त्र में कभी-कभी गुरु को लघु तथा लघु को गुरु मानकर पढ़ने की प्रथा प्रचलित है। यह बात संस्कृत भाषा के छन्दों के विषय में नहीं कही जा सकती। हिन्दी भाषा में कई शब्दों के मध्य कुछ वर्ण ऐसे भी होते हैं जिनका उच्चारण न लघु (ह्रस्व) रूप में होता है न

Scanned by CamScanner

गुरु (दीर्घ) रूप में; जिसे, संकेत द्वारा कुछ भी नहीं कहा जा सकता। प्रारम्भ से ही इस ओर हिन्दी छन्दाचार्यों का ध्यान न जाने के कारण उसे केवल 'माध्यमिक स्वरोच्चार' कह सकते हैं और, फिर सत्य तो यह है कि वर्ण का लघुत्व और गुरुत्व उसके उच्चारण पर ही निर्भर है, सम्बन्ध बोलने वाले से है। जैसे **'इंद्र जिनिंद्र को गोद धरें चढ़ें मत्तगयंद इरावत सोहैं'** सवैया के इस चरण में को और ड़ें, यद्यपि गुरुवर्ण हैं तथापि लघु उच्चारित किए जाते हैं और इसलिए इनकी एक-एक मात्रा ही समझी जावेगी।

आठों गण के नाम, स्वामी, फल तथा लक्षण—

तीन वरन को एक गन, लघु गुरु तैं वसु भेद।
तासु नाम, लच्छन सुनौ, स्वामी सुफल अखेद ॥७॥

छन्द सवैया, मात्रा ३१

मगन तिगुरु भूलच्छि लहावत, नगन तिलघु सुर शुभ फल देत।
भगन आदि गुरु इंदु सुजस, लघु आदि यगन, जल वृद्धि करेत॥
रगन मध्य लघु, अगिन मृत्यु, गुरुमध्य जगन, रवि रोग निकेत।
सगन अंत गुरु, वायु, भ्रमन, तगनंत लघु, नभ शून्य फलेत ॥८॥

तीन-तीन वर्ण के एक-एक गण होते हैं, ये लघु और गुरु से मिलकर आठ भेदरूप हैं। इनके नाम, लक्षण, स्वामी और फल को आगे सवैया में कहते हैं।

तीन गुरु (ऽऽऽ) को मगण कहते हैं इसका स्वामी पृथ्वी है और फल लक्ष्मी है। तीन लघु (।।।) को नगण कहते हैं इसका स्वामी सुर है और फल शुभ है। आदि गुरु (ऽ।।) को भगण कहते हैं इसका स्वामी चन्द्रमा है और फल सुयश है। आदि लघु (।ऽऽ) को यगण कहते हैं इसका स्वामी जल है और फल वृद्धि है। मध्य लघु (ऽ।ऽ) रगण है इसका स्वामी अग्नि है और फल मृत्यु है। मध्य गुरु (।ऽ।) जगण है इसका स्वामी सूर्य है और फल रोग है। अन्त गुरु (।।ऽ) सगण है इसका स्वामी वायु है और फल भ्रमण है। अन्त लघु (ऽऽ।) तगण है इसका स्वामी आकाश है और फल शून्य है। इन्हें ही आगे चार्ट में दिखलाया है।

Scanned by CamScanner

❋ चार्ट—आठों गण के नाम, स्वामी, फल तथा लक्षण ❋

गण का संकेत चिन्ह	गण के नाम	लक्षण	स्वामी	फल	शुभाशुभ	उदाहरण
ऽ ऽ ऽ	म—गण	तीनों गुरु	पृथ्वी	लक्ष्मी	शुभ	राजाज्ञा
। । ।	न—गण	तीनों लघु	सुर	शुभ	"	अमित
ऽ । ।	भ—गण	आदि गुरु	चन्द्रमा	सुयश	"	पावन
। ऽ ऽ	य—गण	आदि लघु	जल	बुद्धि कर या आयु	"	जिनेन्द्र
। ऽ ।	ज—गण	मध्य में गुरु	सूर्य	रोग	अशुभ	मदैव
ऽ । ऽ	र—गण	मध्य में लघु	अग्नि	मृत्यु	"	मालती
। । ऽ	स—गण	अंत में गुरु	वायु	श्रमण	"	रजनी
ऽ ऽ ।	त—गण	अंत में लघु	नभ	शून्य	"	दीनार

विशेषार्थ—प्रत्येक पाठक को गणों के नाम और लक्षण कण्ठस्थ कर लेना चाहिए और इसके लिए **'यमाताराजभानसलगा'** इन दस अक्षरों के सूत्र को याद करना अच्छा रहता है। किहीं भी तीन वर्णों के गण की जांच करना हो तो वे जिस क्रम से लघु-गुरु के रूप में हों, उसी क्रम के तीन वर्ण उक्त सूत्र में से चुन लेना चाहिए उन तीन वर्णों में जो अक्षर प्रथम हो, उसी नाम का गण, उन जानने योग्य वर्णों का है, ऐसा समझना चाहिए। यह बात ऊपर के 'उदाहरण' कोष्ठक द्वारा सहज ही में समझी जा सकती है। सूत्र के अन्त में जो 'लगा' यह दो वर्ण हैं, वे लघु और गुरु के लिए हैं। लघु की एक और गुरु की दो मात्राएं मानी जाती हैं। इस सम्बन्ध में एक श्लोक यह भी बहुत प्रसिद्ध एवं सरल है—

आदिमध्यावसानेषु, भजसा यान्ति गौरवम्।
यरता लाघवं यान्ति, म नौ तु गुरु लाघवम्[1] **॥३॥**

१. श्रुतबोध।

Scanned by CamScanner

आदि गुरु भगण (ऽ।।), मध्य गुरु जगण (।ऽ।), अंत गुरु सगण (।।ऽ) है। ऐसे ही आदि लघु यगण (।ऽऽ), मध्य लघु रगण (ऽ।ऽ), अंत लघु तगण (ऽऽ।) हैं पुनः तीनों गुरु मगण (ऽऽऽ) और तीनों लघु नगण (।।।) होते हैं।

गणों के विषय में रचयिता के विचार—

मगन नगन भगनो यगन, शुभ कहियतु है येह।
रगन जगन सगनो तगन, अशुभ कहावत तेह ॥९॥

मनुज कवित की आदि में, करिये तहाँ विचार।
देव प्रबन्ध विषैं नहीं, इनको दोष लगार ॥१०॥

मगण, नगण, भगण और यगण ये शुभ हैं। रगण, जगण, सगण और तगण ये अशुभ कहलाने हैं। मनुष्यों के लिये कविता बनाते समय कविता की आदि में इनका विचार करना चाहिये तथा भगवान् के चरित आदि के रचते समय इनका दोष नहीं होता है ऐसा समझना।

त्याग निरख नर कवित महं, अ-गन[1] मनहिविलखाय।
आये सरन जिनंद के, निज-निज दोष विहाय ॥११॥

सुधा-सिंधु महं गरल[2] कन, मिलत अमी[3] व्है जात।
यह विचार गुरु ग्रंथ महं, गहन करी गन व्रात ॥१२॥

रचयिता की प्रतिज्ञा—

गहत प्रतिग्या वृंद कवि, करि गुरु चरन प्रणाम।
अरथ सहित सब छंद के, परै अन्त में नाम ॥१३॥

आठ गननि के छंद जे, तिनके गन जुत नाम।
छंद माहिं गर्भित रहैं, जिनमें जिन गुण ग्राम ॥१४॥

---

१. अशुभगन २. विषकी कणिका ३. अमृत।

Scanned by CamScanner

स्यादवाद लच्छन सहित, जिनवानी सुखकंद।
ताही को रस छंद में, प्रगट धरत अवि वृंद ॥१५॥

॥ इति पीठिका विधान ॥

आठ गणों के आठ छन्द—

इन छन्दों में यह विशेषता है कि छन्द के अंत में छन्द का नाम तो श्लेष रूप में आया ही है, लेकिन कौनसा गण कितनी बार प्रयुक्त हुआ है, यह भी छन्द के आदि या मध्य में, कवि ने श्लेष द्वारा व्यक्त कर दिया है। समस्त छन्दों में भगवान जिनेंद्र, दिगम्बर मुनि, जिनवाणी के प्रति हार्दिक प्रगाढ़ श्रद्धा तो निहित है ही, परन्तु यह भी प्रकट हुए बिना नहीं रहता कि कवि के इस परिश्रम पूर्ण प्रयास में कर्कशता या कर्ण-कटुता नहीं आ पाई है। सर्वत्र कोमलता, सरलता एवं आनंद ही आनंद की अनुभूति होती है तथा सौंदर्य का दृश्य सम्मुख उपस्थित हो जाता है।

१. तरलनयन छन्द–नगण, सर्वलघु (।।।) वर्ण १२—

जिस छन्द के प्रत्येक चरण में १२–१२ वर्ण एवं चारों नगण हों उसे तरलनयन छन्द कहते हैं। जैसे, उदाहरण—

चतुर[1] नगन मुनि दरसत, भगत उमगि उर सरसत।
नुति-थुति करि मन हरषत, **तरल नयन** जल बरसत ॥१॥

२. मोदक छन्द–भगण, आदि गुरु (ऽ।।) वर्ण १२—

जिस छन्द के प्रत्येक चरण में १२ वर्ण एवं सर्वभगण हों उसे मोदक छंद कहते हैं। जैसे –

भागन[2] च्यार पदारथ पावत, दर्शन ज्ञान व्रतो तप भावत।
सो निहचै विवहार विनोदक, स्वर्ग पवर्ग लहै फल **मोदक** ॥२॥

३. भुजंगप्रयात छन्द–यगण, आदि लघु (।ऽऽ) वर्ण १२—

जिस छंद के प्रत्येक चरण में चारों यगण हों उसे भुजंगप्रयात कहते हैं। जैसे—

---

१. ज्ञानी–नग्न, चार–नगण, २. भाग्य से चार पुरुषार्थ, चार भगण।

Scanned by CamScanner

समौसृत्य की को कहै सर्व बातौं।
लखौ **चारु**[१] **ये** ही अलौकीक जातौं॥
तहां पक्षियों का पती भी रहातौ।
तहां तैं कभी ना **भुजंग प्रयातौ** ॥३॥

४. सारंगी छन्द तथा **चित्रा छन्द–मगण,** सर्व गुरु (ऽऽऽ) वर्ण १५—

जिस छन्द के प्रत्येक चरण में पाँच-पाँच मगण हों उसे सारंगी या चित्रा छन्द कहते हैं। जैसे—

पांचों[२] ही सौं नाता जोरे, तामैं **मग्ना**[३] माचा है।
ताही सेती नाता तोरे, सो ही ग्याता सांचा है॥
आपा ही में सांचै राचै, आपाही को ह्वै रंगी।
सो ही वे वै[३] आपा माहीं, **चित्रा** बाजा **सारंगी** ॥४॥

५. मैनावली छन्द–तगण, अन्त लघु (ऽऽ।), वर्ण १२—

जिस छन्द के चारों ही चरण में चार-चार तगण हों उसे मैनावली छन्द कहते हैं। जैसे—

च्यारों[४] **तरैं** के जिते देव के भेव,
जैनेंद्र ही को करैं प्रीति सों सेव।
भैटारिवे[५] की यही जासकी टेव,
मैं–नांव-लीनों मुझे तारि है देव ॥५॥

६. लक्ष्मीधरा छन्द–रगण, मध्य लघु (ऽ।ऽ), वर्ण १२—

जिस छन्द के प्रत्येक चरण में चार-चार रगण हों उसे लक्ष्मीधरा छन्द कहते हैं। जैसे—

जग्ग[६] में तग्ग जो चार[७] घाती हरा,
राग[८] **संचार** जाके न हौवे खरा।
सो जिनाधीस निर्दोष सोभा भरा,
वाह्य आभ्यंतरे छंद **लक्ष्मीधरा** ॥६॥

---

१. ये सुन्दर, चार य–गण; २. पांच इंद्रियों में मग्न, पाँच मगण; ३. अनुभव करना; ४. चार तरह के, चार तगण; ५. भय; ६. तज्ञ-तत्वज्ञ; ७. चार घातिया कर्म-ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तराय; ८. राग (प्रेम) का प्रवेश, चार रगण, सं (सहित)

Scanned by CamScanner

७. **तोटक छन्द**—सगण, अन्त गुरु (।।ऽ), वर्ण १२—

जिस छन्द के प्रत्येक चरण में चार-चार सगण हों उसे तोटक छन्द कहते हैं। जैसे—

गन[1] चारस भेद सभाषित ही,
तजि बैर प्रमोद भरें हित ही।
जिन गंधकुटी जुत हैं जित ही,
सम तोटक लागिरह्यौ तित ही ।।७।।

८. **मोतीदाम छन्द**—जगण, मध्य गुरु (।ऽ।), वर्ण १२—

जिस छन्द के प्रत्येक चरण में चार-चार जगण हों उसे मोतीदाम छन्द कहते हैं। जैसे—

जिनेसुर को मुद मंगल धाम। जहां[2] चहुं देव जजंति ललाम ।।
प्रलंबित द्वारनि मैं अभिराम। अमोलमणी जुत **मोतियदाम** ।।८।।

छन्द—प्रकरण

छन्द दो प्रकार के होते हैं—वर्णिक तथा मात्रिक। वर्णिक छन्दों में, प्रत्येक छन्द के प्रत्येक चरण (पाद) में कितने वर्ण होते हैं, इस बात पर विचार किया जाता है तथा गणों का प्रयोग भी इन्हीं छन्दों में किया जाता है। मात्रिक छन्दों में यह सब न होकर केवल मात्राओं पर ही विचार किया जाता है। तात्पर्य इतना ही कि एक में वर्णों पर ध्यान दिया जाता है और दूसरे में मात्राओं पर। छन्दों का विशेष स्पष्टीकरण आगे परिशिष्ट में किया गया है।]

वर्णिक छन्द निरूपण

समवृत्त

श्री छन्द, वर्ण १, प्रस्तार (ऽ)—

दे[3]। मे। ही। श्री ।।१।।

मधु छन्द, वर्ण २, प्रस्तार (।।)—

जिन। धुन। सधु। **मधु** ।।२।।

---

१. चार सगन; २. चार प्रकार के देव, चार जगण; ३. हे भगवन्, मुझे लक्ष्मी दो और लज्जा भी दो।

Scanned by CamScanner

मही छन्द, वर्ण २, प्रस्तार (।ऽ)—

जती[1] । गती ।। वही । **मही** ।।३।।

मन्दर छन्द, वर्ण ३, प्रस्तार (१ भगण)—

कंदर[2] । अंदर ।। सुन्दर । **मंदर** ।।४।।

हरि छन्द, वर्ण ४, प्रस्तार (१ नगण, १ लघु)—

अरचत[3] । परचत ।। जिनवर । **हरि** हर ।।५।।

धारि छन्द, वर्ण ४, प्रस्तार (१ रगण, १ लघु)—

जैन जानि । मोह भानि ।। भर्महारि । धर्म **धारि** ।।६।।

राम छन्द, वर्ण ४, प्रस्तार (१ सगण, १ गुरु)—

जपि नामं । सुख धामं ।। जिनशामं । अभि **रामं** ।।७।।

नायक छन्द, वर्ण ५, प्रस्तार (१ सगण, २ लघु)—

सब लायक । गुन छायक ।।
सुखदायक । जिन **नायक** ।।८।।

चउवंशा छन्द, वर्ण ६, प्रस्तार (न० य०)—

धरम सुअंसा । जग अवतंसा ।।
मुनि परसंशा । वर **चउवंशा** ।।९।।

सूर छन्द, वर्ण ७, प्रस्तार (त० म० १ लघु)—

नारीन के जे नैन । ते तीर तीखे ऐन ।।
जाको न बेधें कूर । सो ही बड़े हैं **सूर** ।।१०।।

---

१. पृथ्वी में यति (—मुनि) की गति 'वही' (=मोक्ष) है या जिस क्षेत्र में मुनि गमन करते हैं वही मही (—पृथ्वी) पवित्र होती है।

२. मुनियों के लिए गुफाएं भी सुन्दर प्रासाद हैं, उन्हें वहीं आनन्द आता है। जैसा कि कहा गया है—

जे वाह्य परवत वन बसैं, गिरि–गुफा महल मनोग।
सिल-सेज, समता-सहचरी, शशि-किरण दीपक जोग।
मृग-मित्र, भोजन-तपमयी, विज्ञान-निर्मल नीर।।

—भूधरदास

३. इन्द्र और हर जिनेन्द्र देव की पूजा करते हैं तथा परिचय प्राप्त करते हैं।

Scanned by CamScanner

क्रीडा छंद, वर्ण ८, प्र० (ग० र० २ गुरु)—

अहो भौ पीर के हर्त्ता । अहो कल्याण के कर्त्ता ॥
हमारी मेटिए पीडा । अतींद्रा में करौं **क्रीडा** ॥११॥

धरा छंद, वर्ण ८, प्र० (त० म० लघु गुरु)—

सांची कथा है जैन की । ज्ञानी मथा है ऐन की ॥
हो पारखी ! देखो खरा । जो ही **धरा** सो ही तरा ॥१२॥

प्रमानिका[1] छंद, वर्ण ८, प्र० (ज० र० लघु, गुरु)—

घटादि क्या पटादि क्या । वृथा रटे सवादि क्या ॥
सधै सुबोध साम का । वही **प्रमान काम का** ॥१३॥

विद्युन्माला छंद, वर्ण ८, प्र० (सर्व गुरु)—

जैना जोगी वर्षा काले । आपा ध्यावै बाधा टालै ॥
कूके केकी, मेघे ज्वाला । चौंधा नच्चै **विद्युन्माला** ॥१४॥

श्लोक छंद, वर्ण ८, प्रस्तार—इसके प्रत्येक चरण का पाँचवाँ अक्षर लघु और छठा दीर्घ होता है तथा दूसरे और चौथे चरण का सातवाँ वर्ण भी लघु होता है। इसे श्लोक अनुष्टुप् कहते हैं। इसमें और कोई नियम नहीं है—

आप्तागम पदार्थों के, स्वामी सर्वज्ञ आप हो ।
सुरिंद वृंद सेवै हैं, आपको **इस लोक** में ॥१५॥

तोमर[2] छंद, वर्ण ९, प्र० (स०, २ ज०)—

जिसने गहा व्रत नेम । कबहुँ न त्यागो तेम ।
उपसर्ग हू महं वाद, नहिं त्याग **तो-मर** जाद ॥१६॥

पुनश्च—

जिसका प्रभू सों नेह । जग धन्य है नर तेह ॥
किन होहु कोटपवाद । नहिं त्याग **तो-मर** जाद ॥१७॥

मत्ता[2] छंद, वर्ण १०, प्र० (म० भ० स० गुरु)—

---

१. इसे प्रमाणी तथा नगस्वरूपिणी भी कहते हैं ।

२. कई लोगों ने इसे मात्रिक समवृत्त माना है, जिसमें १२ मात्राएं और अंत में एक गुरु और लघु वर्ण का होना आवश्यक है— सरस पिंगल पृ० ३६.

Scanned by CamScanner

जैनी जानै निज गुण सत्ता । सो ही पावै शिवपुर[1] पत्ता ॥
जे[2] ऐकांती कुमति विरत्ता । ते का जानै मद करि **मत्ता** ॥१८॥

साखतो[3] छंद, वर्ण १०, प्र० (३ भ०, १ गुरु)—

जास अभ्यासत मोह घटै । अंतर को पट, सो उघटै ॥
जो भवपार उतार वती । सो स्तुति सेइअ **साषती**[4] ॥१९॥

सुखमा[5] छंद, वर्ण १०, प्र० (त० य० भ० १ गु०)—

वामा[6] सुत सौं यारी करियै । काहे मन मैं शंका धरियै ॥
जाकी पदमा[7] दासी कहियै । जो-जो **सुख-मांगो** सो लहियै ॥२०॥

मनोरमा छंद, वर्ण १०, प्र० (न० र० ज० १ गु०)—

करम शत्रु पै कहा क्षमा । धरम-शस्त्र लै तिन्हें गमा ।
अब न चूक मैं कहौं जमा । चिद-विलास में **मनो-रमा** ॥२१॥

मोटन[8] छंद, वर्ण १०, प्र० (३ भ० १ गु०)—

मातु पिता जिमि ढोटन को । पालतु हैं वरु खोटन को ॥
आप दया सम जोटन को । मेटि विथा मन **मोटन** को ॥२२॥

लोलतरङ्ग[9] छंद, वर्ण ११, प्र० (३ भ० २ गु०)—

द्रव्य सुभाविक पर्जय माहीं । हानि न वृद्धि छ भेद सदा ही ॥
सागर बीच उठन्ति उमंगं । सो तित होत **लोल तरंगं** ॥२३॥

सायक छंद, वर्ण ११, प्र० (स० भ० त० ल० गु०) —

अनुभौ में रहिवे लायक हैं । अपने आतम के ज्ञायक हैं ॥
करमों के छल के घायक हैं । मुनि पै क्षपिक ही **सायक** हैं ॥२४॥

---

१. मोक्षनगर का रास्ता (जानकारी) । २. हठवादी, मिथ्यामति ।
३. इसे हालकी कहते हैं । ४. सासती-शाश्वती-हमेशा ।
५. इसे वामा भी कहते हैं । ६. भगवान् पार्श्वनाथ, २३वें तीर्थंकर ।
७. देवी पद्मावती, जिसने अपने पति धरणेन्द्र के साथ, भ० पार्श्वनाथ के ऊपर, कमठ व्यन्तर द्वारा होते हुए उपसर्ग को अपने ऊपर झेला था ।
८. दूसरे कवियों ने इसके पहले एक-एक गुरु वर्ण रखकर ११ वर्णों का मोटनक वृत्त माना है । साषती और इसमें समता भी है ।
९. इसे दोधक तथा बन्धु भी कहते हैं ।

Scanned by CamScanner

स्वागत छन्द, वर्ण ११, प्र० (र० न० भ०, २ गु०)—

हस्तनागपुर हर्ष विसेखी। श्री श्रेयांस नृपहु पुनि पेखी ॥
आदि[1] ईश मुनि स्वागत देखी। दान दीन मन मान अलेखी ॥२५॥

समुद्गका[2] छन्द, वर्ण ११, प्र० (२ न०, र०, लघु, गुरु)—

समकित व्रत आदि जे कहे। सकति प्रमित तास को गहै।
उर नित रटना जिनेंद्र का। तित कहँ यह भौ **समुद्गका** ॥२६॥

अनुकूल छन्द, वर्ण ११, प्र० (भ० त०, न०, २ गु०)—

ता घर होवै निधि धन मूलो। सो सुख पावै अगम अतूलो।
मंगल कारी प्रमुदित फूलो। जाकरि व्है श्री जिन **अनुकूलो** ॥२७॥

सुमुखी छन्द, वर्ण ११, प्र० (भ० २ ज०, ल० गु०)—

निज पद को जिन सांच लखा। अनुभव स्वाद अवाद चखा ॥
पुदगल सौं नहिं राग रुखी। तिन कहं भाषत हैं **सुमुखी** ॥२८॥

हरिनी छन्द, वर्ण ११, प्र० (३ ज० ल०, गु०)—

चिदातम चिन्मय की धरिनी। सुभाविक भावन की परिनी।
सुबोध सुखामृत की झरिनी। वही[3] भव विभ्रम की **हरिनी** ॥२९॥

भुजङ्गी छन्द, वर्ण ११, प्र० (३ य०, ल० गु०)—

अविद्या जिसे ब्रह्मवादी गही। जिसे जैन माहीं विभावी कही ॥
चिदानंद के संग रंगे रही। वही भामिनी को **भुजङ्गी** कही ॥३०॥

भ्रमर विलसिता छन्द, वर्ण ११, प्र० (म०, भ०, न०, ल०, गु०)—

साजे आठों दरब सु लसिता। बाजे बाजें ललित सु लसिता ॥
जैनी आये जजन हुलसिता। फूले फूलों **भ्रमर विलसिता** ॥३१॥

---

१. भगवान् ऋषभदेव, प्रथम तीर्थंकर। मुनि-दीक्षा ग्रहण करने के उपरान्त ६ मास तक तो ध्यानारूढ़ रहे और ६ मास तक आहार की विधि नहीं जमी थी। इस प्रकार एक वर्ष बाद, जब राजा श्रेयांस को पूर्व-भव का जातिस्मरण हुआ, तब उन्होंने सर्व प्रथम, उन्हें आहार दिया था। अक्षय तृतीया का पुण्य उत्सव उसी दिवस की अक्षय-स्मृति में मनाया जाता है।

२. इसे सुभद्रिका भी कहा गया है।

३. दिव्य ध्वनि, जिनवाणी या सरस्वती।

Scanned by CamScanner

रथोद्धता छन्द, वर्ण ११, प्र० (र०, न०, र०, ल०, गु०)—

काललब्धि बिन मुक्ति है नहीं। यो इकन्त मति धारियो कहीं ॥
आतम ज्ञान लव विशुद्ध तो। कीजिये सु पुरुषा रथो-द्धतो ॥३३॥

शालिनी छन्द, वर्ण ११, प्र० (म०, २ त०, २ गु०)—

जैनीवानी जगत की पालिनी है। जैनीवानी आपदा टालिनी है ॥
जैनीवानी निर्मला-ह्लादिनी है। मिथ्यावादी के हिये शालिनी है॥३४

इन्द्रवज्रा[1] छन्द, वर्ण ११, प्र० (२ त०, ज०, २ गु०)—

नंदीश्वर द्वीप महाकहा है। चैत्यालये बावन जो तहाँ है ॥
अष्टाह्निका माहिं प्रमोद हूजै, जे इन्द्रवज्रा युध धारि पूजै ॥३५॥

उपेन्द्रवज्रा छन्द, वर्ण ११, प्र० (ज० त० ज०, २ गु०)—

जहाँ प्रतिष्ठादिक को अखाडो। तहां महानंद समुद्र ठाढो ॥
टालै सबी विघ्न दिगीश गाढो। उपेन्द्रवज्रा युध धारि ठाढो ॥३६॥

द्रुत मध्यक छन्द, वर्ण–प्रथम-तृतीय चरण में ११ तथा द्वितीय-चतुर्थ चरण में १२ वर्ण; यह अर्ध-सम वृत्त है—

कंस विधुंसक श्री जदुराई। जल विच कूद परे जिन ध्याई ॥
नाथ लियो झट देव फनिंदी। प्रगट द्रुये[2] द्रुत मध्य-कलिंदी ॥३७॥

चण्डी छन्द, वर्ण ११, प्र० (र० न० भ०, २ गु०)—

जो कुवादि खल झुंड विहंडी। मोह महा महिषासुर खंडी ॥
जो अवाद सुख कुंड उमंडी। सो सुभाव मुद मंडित चंडी ॥३८॥

कुसुम-विचित्रा छन्द, वर्ण १२, प्र० (न० य० न० य०)—

कब-कब पैहो नर परजाई। सहज न जानो भविजन भाई ॥
जिन पद पूजो मन हरखाई। कुसुम-विचित्रा प्रमुदित लाई ॥३९॥

चन्द्रवर्त्म छन्द, वर्ण १२, प्र० (र० न० भ० स०)—

---

१. इंद्रवज्रा की आदि में गुरु होता है और उपेन्द्रवज्रा की आदि में लघु होता है। यही दोनों में अन्तर है। जिसके किसी चरण में लघु, किसी में गुरु हो उसे उपजाति कहते हैं।

२. जल्दी, शीघ्र।

Scanned by CamScanner

सप्तबीस सु नछत्र बरन हैं। राशि द्वादस प्रमान करन हैं॥
दोय[1] पाव दिन एउ पर रहै। चंद्रवर्त्म[2] महं भेद यह कहै॥३९॥

प्रमिताक्षरा छन्द, वर्ण १२, प्र० (स० ज०, २ स०)—

जब शब्द नीति जुत न्याय पढ़ै। कवितादि ग्रंथ पर प्रीति बढ़ै॥
गुरुतें अधीत[3] लखि लौकिक त्यौं। कवि वृंद होत **प्रमिताक्षर** यौं॥४०

प्रियंवदा छन्द, वर्ण १२, प्र० (न० भ० ज० र०)—

धरम एक शिव हेत है सदा। धरम एक सुरगादि सम्पदा॥
अपर नाहिं तिरलोक में कदा। मधुर बैन गुरु यो **प्रियंवदा**॥४१॥

तामरस छन्द, वर्ण १२, प्र० (न०, २ ज०, म०)—

जिन पद पूजत मंगल हूजे। जिन पद पूजत वांछित पूजे॥
जिन पद में कमला अनुरागी। जिन पद **तामरसे**[4] मनपागी॥४२॥

सुन्दरी या द्रुत **विलम्बित** छन्द, वर्ण १२, प्र० (न०, २ भ०, र०)—

सुव्रत शील विभूषित जो नरी। जिन जजै वर भाव भरी खरी॥
वह वरै सुरइंद मुकुन्दरी। जगत पावन सो तिय **सुन्दरी**॥४३॥

वंशस्थविल तथा **इन्द्रवंशा** छन्द, वर्ण १२, प्र० (ज०, त०, ज०, र०)—

श्रीराम श्रीलक्ष्मण जानकी सती। विलोकि पीडा गुरुदेव की अती॥
तुरंत धन्वा धुनि तैं निकंदितं। योगोन्द्र **वंशस्थ विलोकि** वंदितं॥४४

ललिता[5] छन्द, वर्ण १२, प्र० (२ त०, ज०, र०)—

देखो अविद्या घट में समा रही।
आपा चिदानंद लखै कभी नहीं॥
जाके सुने आप स्वरूप को गही।
आनन्द कारी **ललिता** कथा वही॥४५॥

मंजु भाषिणी छन्द, वर्ण १३, प्र० (स० ज० स० ज० गु०)—

प्रमदा प्रवीन व्रतलीन पावनी।
दिढ शील पालि कुलरीति राखिनी।

---

१. सवा दो दिन। २. चन्द्रमा का मार्ग।
३. पढ़ा हुआ, शिक्षित। ४. कमल, पद्म।
५. किसी-किसी ने (त०, भ० ज०, र०) को ललिता वृत्त माना है।

Scanned by CamScanner

जल अन्न शोध मुनि दान दायिनी।
वह धन्य नारि मृदु **मंजु भाषिणी** ॥४६॥

वसन्त-तिलका छन्द, वर्ण १४, प्र० (त० भ० २ ज०, २ गु०)—
श्रीद्रोणजा जनकजादि रमा समानी।
घेरें सभी भरत को रितुराज ठानी॥
कीनों अनेक मन लोभन को उपायौ।
तो भी **वसंत तिल-काम** नहीं हि आयौ ॥४७॥

चक्र छन्द, वर्ण १४, प्र० (भ०, ३ न०, ल०, गु०)—
श्री जिन मुख निरखत दुख टरहीं।
पाय अमित[1] बित भवि सुख भरही॥
पाप विघन तित किहि विधि जुरहीं।
चक्र धरम निवसत प्रभु पुरही ॥४८॥

अचलधृत छन्द, वर्ण १६, प्र० (५ न०, १ ल०)—
करम भरम वश भमत जगत नित।
सुर-नर-पशु तन धरत अमित तित॥
सकल अथिर लखि परवश परकृत।
धरम रतन जिन भनित **अचलधृत** ॥४९॥

प्रहरन कलिका छन्द, वर्ण १४, प्र० (२ न०, भ०, न०, ल०, गु०)—
यह जिनवर का धरम रतन हो।
सुरग मुकत का सुखद सदन हो॥
तद-गत चित सौं गहहु सरन कौ।
प्रहरन-कलि का-टन दुख-गन कौ ॥५०॥

चामर[2] छन्द, वर्ण १५, प्र० (र०, ज०, र०, ज०, र०)—
छत्र[3] तीन सिंह पीठ पुष्प वृष्टि तापरं।
अर्ध मागधी सुगी[4] अशोक वृक्ष कावरं॥

---

१. अपार सम्पत्ति, सुख-भोग।

२. इसे तूण तथा सोमवल्लरी भी कहते हैं।

३. इस छन्द में तीर्थंकर भगवान के ८ प्रातिहार्यों का वर्णन है। यह देवकृत हैं, समवशरन में होते हैं।

४. गी. अर्थात् वाणी-सुवाणी।

Scanned by CamScanner

देव दुंदुभी अनूप देह की प्रभा भरं।
देखि देव देव पैं ढुरंति वृंद चामरं ॥५१॥

नाराच[1] छन्द, वर्ण १६, प्र० (ज०, र०, ज०, र०, ज०, गु०)—

जजौ जिनेंद चंद के पदारविंद चावसौं।
मुनिंद को सुदान दे, उमंग के बढ़ाव सौं॥
अभंग सात-भंग[2] रंग में पगो प्रभाव सौं।
यही उपाय सौं तरो **न-राच** भोग भाव सौं॥५२॥

नव मालिनी[3] छन्द, वर्ण १५, प्र० (२ न०, म०, २ य०)—

जिनवर पद पूजा की सुनो हो बड़ाई।
गज शुक मिंडका[4] से देव जोनी लहाई॥
सुगन-सुमन सेती देहरी पैं चढ़ाई।
तिहि फल करि ताने-**मालिनी** स्वर्ग पाई॥५३॥

मन्दाक्रान्ता छन्द, वर्ण १७, प्र० (म० भ० न०, २ त०, २ गु०)—

अर्हत्स्वामी समवसृत में, राजते भीति हंता।
शोभा जाकी सुर गुरु कहें, पार नाहीं लहंता॥
जाकी काया दर्शन किये, दूर ही होत भ्रान्ता।
सर्वेंद्रों की सब दुति जहां हो रही **मन्दक्रान्ता**॥५४॥

स्रग्धरा छन्द, वर्ण २१, प्र० (म०, र०, भ०, न० ३ य०)—

---

१. किसी-किसी ने इसे पंच-चामर लिखा है। अनेक कवियों का मत है कि दो नगण और चार रगण का नाराच छन्द होता है।

२. सात भंग (=सप्त भंगी) जैन दर्शन के स्याद्वाद का विशेष और प्रमुख रूप।

३. मालिनी और मंजु मालिनी भी इसे ही कहते हैं।

४. मेंढक। भव्य भावों से भरा एक मेंढक भ. महावीर स्वामी की पूजा के लिए समवशरन में मुंह में एक पुष्प लेकर जा रहा था कि राह में सम्राट के हाथी से कुचल गया। लेकिन मन की शुद्धि और भावना के कारण वह स्वर्ग में जाकर तत्काल देव हो गया और वहां से वह फिर अपनी अपार विभूति के साथ पूजा के लिए आया था।

Scanned by CamScanner

तीनों[1] रत्न त्रिवेनी-सुविमल–जल की धार में जो नहावै ।
निश्चै घाती विघाती, करमज-मल को मूल से सो बहावै ॥
पावै चारौं[2] अनंता, निजगुण अमलानंद वृंदा धरा है ।
ताकी काया अछाया अनुपम पग पै पुष्प का स्रग्धरा है ॥५५॥

चित्रलेखा छन्द, वर्ण १८, प्र० (म०, भ०, न०, ३ य०)—

जैनीवानी अमल अचल है, दोष की नासनी है ।
सोई मोकों परम धरम दे, तत्व की भासनी है ॥
बाकी[3] जेते जगत जनन सों है चला मार्ग भेखा ।
तामैं पेखा कथन अमिलते, दोष में **चित्रलेखा** ॥५६॥

शिखरिणी छन्द, वर्ण १७, प्र० (य०. भ०, न०, स०, ल०, गु०) –

जहां कोई प्रानी चढत गुणथाने उपसमी ।
गिराआवै नीचे सुमग महें सम्यक्त्वहिं बमी ॥
जहाँ द्वेधा धारा बहत निजभावें विपरिनी ।
दही मीठाखाई वमन समये ज्यों **शिखरिनी** ॥५७॥

शार्दूल विक्रीडित छन्द, वर्ण १९, प्र० (म०, स०, ज०, स०, २ त०,गुरु)—

मों[4] सो जी सततं गुरुगन जती ये कर्मशत्रू टरे ।
सोई आप उपाय शीघ्र करिये, हो दीनबन्धु वरे ॥
आपी[5] स्वर्ग-पवर्ग देत जन कों, रक्षाकरो पीडितैं ।
आपी सर्व कुवादि जीति भगवन्**शार्दूल विक्रीडते** ॥५८॥

॥ वर्णिक-सम-संस्कृत-वृत्त समाप्त ॥

---

१. रत्न-त्रय (सम्यक्दर्शन, सम्यक्ज्ञान और सम्यक्चारित्र) रूपी निर्मल जल की धारा ।

२. अनन्त चतुष्टय (अनन्त दर्शन, अनन्त ज्ञान, अनन्त सुख और अनन्त वीर्य)

३. जैन के सिवाय संसार में जितने धर्म मार्ग चले हैं, वे कु–भेषियों द्वारा ही चले हैं–सच्चा मार्ग तो एक जैन ही है।

४. इस उदाहरण में छन्द का लक्षण भी दे दिया है। अर्थात्–मोंसोजी सततं गुरु' ये इस छन्द में जो-जो गण हैं, उनके सूचक आदि के अक्षर हैं। मों से मगण, सो से सगण आदि समझना चाहिए ।

५. आपी (= आप ही) ।

Scanned by CamScanner

मात्रिक छन्द निरूपण

मात्रिक वृत्तों में मात्राओं की ही निगती होती है। लघु वर्ण की एक और गुरुवर्ण की दो मात्राएँ होती हैं। इस प्रकरण में वर्णों को लघु-गुरु न कहकर ह्रस्व-दीर्घ कहते हैं।

गाथा प्रकरणाष्टक–

गाहू[1] (अर्ध-सम)

इसके प्रथम-तृतीय चरण में १२-१२ और द्वितीय-चतुर्थ चरण में १५-१५ मात्राएँ होती हैं—

जिन धुनि जलधि अगाहू। जाको नाहीं कहूँ थाहू।
जिन मंथि[2] सुरतन लाहू। वृंदावन ताहि अवगाहू ॥५९॥

गाहा[3] और **अवगाहा** (विषम)

इसके चारों चरणों में क्रम से १२, १८, १२, १५ मात्राएँ होती हैं—

चिन मूरत अमलीनो। जाके गुन-सिंधु को नहीं थाहा ॥
जिन मथि सुरतन लीनो। तिन यह भव सिंधु अवगाहा ॥६०॥

उग्गाहा (विषम)

इसके द्वितीय-चतुर्थ चरण में १८-१८ तथा प्रथम में १२ और तृतीय में २० मात्राएँ होती हैं—

अष्टांग जोग जेता। सो याही घट समुद्र सुग्गाहा ॥
ज्ञानानंद निकेता। स भेद विज्ञान वृंद उग्गाहा ॥६१॥

खन्धो[4] (अर्ध-सम)

इसके प्रथम-तृतीय चरणों में १२-१२ और द्वितीय-चतुर्थ में २०-२० मात्राएँ होती हैं—

सुगुरु कहत समुझाई। तू हो ज्ञाता सहज सुद्ध निः संधो।
काहे भूलो भाई। काया है पुग्गल हि द्रव्य को खन्धो ॥६२॥

---

१. इसे उपगीती भी कहते हैं। २. सु-रतम = रत्नत्रय; देवगति।
३. इसे आर्या भी कहते हैं।
४. इसे आर्यागीत या स्कन्धक भी कहते हैं। यह आर्या का भेद विशेष है।

Scanned by CamScanner

चपला[1] गाथा (विषम)

इसके प्रथम-तृतीय चरणों में १२-१२ तथा द्वितीय-चतुर्थ में क्रमश १८, १५ मात्राएँ होती हैं—

जेते जन जगवासी, तथा जिन्होंने मुंडाई है माथा।
ते सब धन के प्यासी, यह चपला ने जगत गाथा ॥६३॥

विगाहा[2] (विषम)

इसके प्रथम-तृतीय चरणों में १२-१२ और द्वितीय में १५, चतुर्थ में १८ मात्राएँ होती हैं—

श्री जिन जन्म उछाहा, गिरिंद[3] पै हो रहा आहा।
शोभा सिंधु अथाहा, भवि-गाहा इंद्र ने लिया लाहा[4] ॥६४॥

सिंहनी (विषम)

इसके प्रथम-तृतीय चरणों में १२-१२ और द्वितीय में २०, चतुर्थ में १८ मात्राएँ होती हैं—

समवसरन महँ देखो, जन्तू जाती विरोध को सब टालै।
अद्भुत अकथ अलेखो, हरिनी को बाल सिंहनी पालै ॥६५॥

गाहिनी (विषम)

इसके प्रथम-तृतीय चरणों में १२-१२ और द्वितीय में १८, चतुर्थ में १६ मात्राएँ होती हैं—

चेतन रस लवलीना, निज अनुभूति प्रदायिनी शुद्धी।
वंदत वृंद प्रवीना, जै आगम अध्यातम गाहिनी ॥६६॥

॥ इति गाथा प्रकरणाष्टक ॥

---

१. इसे गीति भी कहते हैं।

२. इसे उद्गीति तथा विगाथा भी कहते हैं।

३. सुमेरु पर्वत। जब तीर्थङ्कर भगवान का जन्म होता है तब स्वर्गों के इन्द्र जन्म कल्याणोत्सव मनाते हैं और नवजात तीर्थङ्कर-शिशु को सुमेरुगिरि पर ले जाकर एक सर्वोच्च विशेष स्थान पाण्डुक-शिला पर स्थित अकृत्रिम सिंहासन पर विराजमान कर अभिषेक करते हैं। इसके लिए पांचवें क्षीर-समुद्र से दुग्ध पंक्ति बद्ध खड़े देवों-देवाङ्गनाओं द्वारा हाथों-हाथ आता है। इस मनोरम वर्णन का आनन्द पं० रूपचन्द्रजी के पंचकल्याणक मंगलपाठ को पढ़कर प्राप्त किया जा सकता है।

४. लाभ, आनन्द, पुण्य।

Scanned by CamScanner

अब नित्य प्रयोग में आने वाले हिन्दी के सुप्रसिद्ध मात्रिक अर्ध-सम तथा विषम छन्दों का वर्णन किया जा रहा है।

दोहा (अर्धसम)

इसके प्रथम-तृतीय चरणों में १३–१३ और द्वितीय-चतुर्थ में ११–११ मात्राएँ होती हैं। यह अर्धसम वृत्त है—

नेमि[1] स्वामि निरवान थल, शोभत गढ़ गिरनार।
वंदौं सोरठ देश में, दोहाथ-नि सिरधार ॥६७॥

सोरठा (अर्धसम)

यह दोहे का उलटा होता है। इसके प्रथम-तृतीय चरणों में ११–११ तथा द्वितीय-चतुर्थ में १३–१३ मात्राएँ होती हैं। यह अर्धसम वृत है—

शोभत गढ़ गिरनार, नेमि स्वामि निरवान थल।
दो हाथनि सिरधार, वंदौं सोरठ[2] देश मैं ॥६८॥

हाकलिका (सम)

इसके प्रत्येक चरण में १४–१४ मात्राएँ और १२–१२ वर्ण होते हैं। यह सम वृत्त है—

सब जिय निज समतूल गनै।
निशि-दिन जिनवर बैन भनै ॥
निज अनुभव रस-रीति धरैं।
तासु कहा-कलि काल करै ॥६९॥

पद्धरी (डी) (सम)

इसके प्रत्येक चरण में १६–१६ मात्राएँ होती हैं। अन्त में लघु होना चाहिए—

जिन-बाल छबी सचि[3] लखी आय।
मन अडी खडी टकटकी लाय ॥

---

१. भ. नेमिनाथ, २२ वें तीर्थंकर, श्रीकृष्ण के चचेरे भ्राता।
२. सौराष्ट्र देश, काठियावाड़–गुजरात।
३. इन्द्रानी, शचि।

Scanned by CamScanner

उमग्यौ उमंग मन में न माय ।
तव गद् पद् पद्धरी गाय ॥७॥

रूप[1] चौपई (चौपाई) (सम)

इसके प्रत्येक चरण में १६-१६ मात्राएँ होती हैं। चरणान्त में जगण (।ऽ।) या तगण (ऽऽ।) कदापि न रखना चाहिए और दो गुरु ही होने चाहिए—

भवथित उघटित निकट रही है ।
सुगुरु वचन जुत प्रीति गही है ॥
बसत सुसंग कुसंगत खोई ।
सहज स-रूप-चौप-इमि[2] होई ॥७१॥

अडिल्ल (सम)

इसके प्रत्येक चरण में २१-२१ मात्राएँ होती हैं—

कामिनि-तन-कांतार[3], काम जहां भिल्ल है ।
पंच बान[4] कर धरैं, गुमान अखिल्ल है ॥
करै जगत जन जेर[5], न जाके ढिल्ल[6] है ।
शील बिना नहिं हटत, बडो ही अडिल्ल[7] है ॥७२॥

कुण्डलिया (विषम)

यह छन्द (दोहा+रोला) से बनता है। कुल मात्राएँ १४४ होती है। विशेषता यह है कि दोहे का अन्तिम चरण, रोला का आदि चरण बनता है तथा रोला के अन्तिम चरण (छंदान्त) में प्रायः वही शब्द आने चाहिए जो छन्द के प्रारम्भ (दोहे की आदि) में आते हैं—

राजै प्रभु को गोद धरि, जनम समय सुरराय ।
तुरत जात गिरिराज पर, **विधिजुत न्हौन कराय** ॥
विधिजुत न्हौन कराय, गाय गुन बाजत बाजै ।

---

१. इसके अन्त में लघु होने से १५ मात्रा की चौपई होती है।
२. आत्म स्वरूप में 'चौप' अर्थात् प्रेम। ३. वन, जंगल।
४. काम-बाण। ५. आपत्ति-ग्रस्त, नष्ट भ्रष्ट।
६. ढील, सुस्ती। ७. अड़ियल, हठी, दुष्ट।

Scanned by CamScanner

तांडव नाचे इंद्र, वृंद उच्छव छवि छाजै ।।
त्रिभुवन भूषण देव, तिन्हैं भूषण सब साजै ।
कोट[1] भानु दुति हरन, करन[2] कुंडलिय विराजै ।।७३।।

अमृत ध्वनि (विषम)

यह एक यौगिक छन्द विशेष होता है, जिसमें २५ मात्राएं होना चाहिए और आदि में एक दोहा रखा जाकर कुल ६ चरण होते हैं। इस प्रकार कुल १४८ मात्राएं होती हैं। परन्तु कविवर ने दोहा रखकर आगे २४ मात्रा का छन्द रखा है और इस प्रकार कुल १४४ मात्राओं का अमृत ध्वनि छन्द माना है। माना गया है कि इसके प्रत्येक चरण में द्वित्व समेत तीन यमक होते हैं। पर यहां ऐसा क्रम नहीं रखा गया है। हां, अनुप्रास की प्रधानता अवश्य है—

धुनि[3] जिन खिरत अनच्छरी, जोजन परमित हद्द ।
उपमा जाकी कहत कवि, जथा अब्द[4] को शब्द ।।
सद्दन[5] सुनि सुनि मग्गन सुर–मुनि, पग्गत तन मन ।
भज्जत भ्रम तम, सज्जत जम नम, जज्जत जिन जन ।।
हर्षत सुमनन[6], वर्षत सुमनन, कुज्जत अलि पुनि ।
भव्व[7] मुदित चित, सव्व कहत तित, सत[8] अमृत धुनि ।।७४।।

हुल्लास (विषम)

यह चौपाई और त्रिभंगी के योग से बनता है। कुल मात्राएं १९२ होती हैं—

पारस जनम दिवस अनुकूले । अश्वसेन तन मन सुधि भूले ।।
सुर नर तन, धन, धरनिलुटावहिं । दिवि तैं देव रतन बरसावहिं ।।

---

१. करोड़ों सूर्य के तेज को हरने वाले ।
२. कर्ण, कानों में । ३. दिव्य–ध्वनि ।
४. जैसे मेघ गर्जना । जिनेन्द्र–ध्वनि को सब प्राणी अपनी-अपनी भाषा में समझ जाते हैं ।
५. शब्दों को । ६. सु–मन–अच्छे, पवित्र मन ।
७. भव्य–सात्विक । ८. सच में ।

Scanned by CamScanner

रतननि बरसावहिं, मन हरखावहिं, सजि सजि आवहिं बाहन को।
बहु भगत बढ़ावहिं, सुख उपजावहिं, दुरित[1] नशावहिं, दाहन को॥
सुर-गिर नहवावहिं, मंगल गावहिं, नाच रचावहिं चावन को।
अविवृंद हुलासहिं, जस परकासहिं, सिवपुर[2] वासहिं पावन को॥७५॥

काव्य (रोला) (सम)

इसके प्रत्येक चरण में २४ मात्राएं होती हैं और ११-१३ पर यति—

श्री सरवग्य अदोष, मोक्ष हित तत्त्व बताई।
ताही के अनुसार, कथन जामैं सुख दाई॥
जाके सुनत प्रमान, मोह तम नाहिं रहावत।
सु-पर[3] बोध हिय होत, वही सत-काव्य कहावत॥७६॥

मद[4] अवलिप्त कपोल (सम)

इसके प्रत्येक चरण में २४ मात्राएं, यति ११-१३ पर—

श्री जिनवर को जनम, जानि जब इंद्र चलै है।
सात[5] भांत को सैन, आपने संग लहै है॥
ऐरावत पर चढै, तबै देखत बनि आवत।
मद[6] अवलिप्त कपोल, लुब्ध अलि आगै धावत॥७७॥

शंभु (सम)

इसके प्रत्येक चरण में ३२ मात्राएं। ८, ८, १६ पर यति—

नहिं कामी है, नहिं क्रोधी है, नहिं लोभी मोही बंछा[7] है।

---

१. पाप, दुख। २. शिवपुर—मोक्ष।

३. स्व—पर, अपना और पराया।

४. कविराज हेमराजजी ने अपने भक्तामर स्तोत्र के अनुवाद में जो रोड़क छन्द रखे हैं, उनमें पहले छन्द के प्रारम्भ में—"मद अवलिप्त कपोल मूल अलि कुल झंकारैं" ऐसा पद रखा है। जान पड़ता है इसी के कारण इसका नाम 'मदअवलिप्त कपोल' पड़ गया है। अनेक कवि तो 'चाल मदअवलिप्तकपोल की' इस तरह लिखते आए, परन्तु वृन्दावनजी ने इसका नाम ही 'मद अवलिप्त कपोल' रख दिया।

५. सात प्रकार की सेना—हाथी, घोड़ा, रथ, पयादे, बैल, गंधर्व और नर्तक।

६. मद से लिपटे हुए कपोलों में लुब्ध लालची भौंरे।

७. वांछा—इच्छापूर्ण।

Scanned by CamScanner

नहिं रागी है, नहिं द्वेषी है, नहिं जामैं कोऊ लंछा[1] है ॥
निज ही में आप सु आपी को, वह आपी पाये राचा है।
सब प्रानी का हित, बानी का-फल, सो ही शंभू[2] सांचा है ॥७८॥

झूलना (सम)

इसके प्रत्येक चरण में ३७ मात्राएं होती हैं तथा २०, १७ पर यति—

नेह औ मोह के खंभ जामैं लगे, चौकडी चार डोरी सुहावै।
चाह की पाटरी, जास पैं है परी, पुण्य औ पाप जी को भुलावै ॥
सात राजू अधो, सात ऊंचै चलै, सर्व संसार को सो भमावै।
एक सम्यक-ज्ञानी ही झूलना सौं कूदि के वृंद भवपार जावै[3] ॥७९॥

नरिन्द (=नरेन्द्र) अथवा जोगीरासा (सम)

इसके प्रत्येक चरण में २८ मात्राएं होती हैं तथा १६, १२ पर यति—

समकित सहित सुव्रत निरबाहैं, राजनीति मन लावै।
श्री जिनराज चरन नित पूजं, मुनि लखि भगति बढ़ावै ॥
चार[4] प्रकार दान नित देकै, सुर-पुर महल बनावै।
न्याय समेत प्रजा प्रतिपालै, सो नरिन्द सुख पावै ॥८०॥

घत्तानन्द (सम)

इसके प्रत्येक चरण में २९ मात्राएं और ९, ७, ७, ६ पर यति—

जो चारउ[5] घत्ता, चार-अघत्ता[6], घत्त विरत्ता हत्त करै।

---

१. लांछन-दोष।

२. शम्भू=ईश्वर। जिनेन्द्र भगवान्। संसारी लोगों में जो १८ दोष होते हैं, वे उनमें किंचित् भी नहीं रहते। १८ दोषों से रहित ईश्वर ही सच्चा ईश्वर होता है। वे दे हैं—भूख, प्यास, भय, द्वेष, राग, मोह, चिन्ता, बुढापा, रोग, मृत्यु, खेद, स्वेद, मद, अरति, आश्चर्य जन्म, निद्रा और शोक। 'ये नहीं होते अरिहन्त के सौ छवि लायक मोख'। (ii) अन्य कवियों ने इसे वर्णित वृत्त माना है जिसमें १९ वर्ण और (स०, त०, प०, भ०, २ भ०, गु०) प्रस्तार रहता है। किन्तु वृन्दावनजी ने मात्रिक कहकर भी क्रम वही रखा है।

३. यहां संसार और झूले का सुन्दर रूपक बांधा गया है।

४. चारदान-औषध, शास्त्र, अभय और आहार।

५. चार घातिया कर्म। ६. चार अघातिया कर्म।

Scanned by CamScanner

सो आतम सत्ता, शुद्ध महत्ता, पाय सुघत्तानन्द भरै ॥८१॥

सवैया[1] (वीर अथवा आल्हा) (सम)

इसके प्रत्येक चरण में ३१ मात्राएं होती हैं। इसे संयुक्त छन्द भी कह सकते हैं, क्योंकि इसमें चौपाई और चौपई यह भिन्न-भिन्न दो छन्द मिले रहते हैं। १६, १५ पर यति—

बीस अंक परमित गनधर धुनि, पूरब चौदह अंक प्रमान।
उनतिस अंक मनुष सब सैनी, दश कुल कोड़ जोड़ ठहरान॥
सरसों कुंड छियाल पल्लके, कुंड रोम पैंतालिस मान।
अंक **सवैया** विधि सौं लिखि कै, परखो हरखो वृंद समान ॥८२॥

चौबोला (सम)

इसमें ३० मात्राएं होती हैं। अन्त में ल० गु० (।ऽ); वृंदावनजी ने चार पंक्तियों का माना है। कोई इससे आधा मानते हैं—

जाको सुनत मुदित मन भविजन, उदित होत चित चेत लहै।
हेय गेय अरु उपादेय पहिचानि, वृंद निज रूप गहै॥
सुरग मुकत पदवी को पावै, राग-दोष मद-मोह दहै।
ऐसो हित मित दोष रहित नित, मुनिवर **सांचौ-बोल-कहै** ॥८३॥

त्रिभङ्गी (सम)

इसमें ३२ मात्राएं होती हैं। आदि में जगन (।ऽ।) वर्जित है। १०, ८, ८, ६ पर यति। अन्त में गुरु वर्ण का होना आवश्यक है—

जो सात सुभगी, विमल तरंगी, भंग अभंगी सुखसंगी।
ताके अनुसारै, तत्त्व विचारै, मोह निवारै, बहु रंगी॥
तिहुँ रतन अराधै, अनुभव साधै, त्यागि उपाधै मन चंगी।
सत्तादि त्रिभङ्गी, सो करि भंगी, होत सुरंगी शिवसंगी ॥८४॥

छप्पय (षट्पद) (विषम)

यह रोला और उल्लाला के योग से बनता है। रोला के २४ मात्रा वाले चार चरण और उल्लाला के २८ मात्रा वाले दो चरण; इस प्रकार

---

१. इसे पंवारा भी कहते हैं।

Scanned by CamScanner

कुल १५२ मात्रा का छप्पय होता है। उल्लाला के द्वितीय तथा चतुर्थ चरण के अन्त में नगण (।।।) रखने से छन्द की गति अधिक रोचक बन पड़ती है—

जासु रुचिर छवि देखि, देखि जब तृपति न पावत।
सुर पति विस्मित होत, नैन तब सहस बनावत॥
जासु पंच-कल्याण[1], जगत कहँ सुख उपजावत।
गुन अनंत भंडार, कहत कोउ पार न पावत॥
शत[2] इंद्र-वृंद वंदत जिसे, सेवत हैं मन मोद धर।
सो श्री जिन चरण-सरोज सौं, मो मन षट्पद प्रीति कर॥८५॥

पुनः षट्पद

जो जग मंगल मूल, रमा जासौं अनुरागी।
जाको ध्यावत भाव सहित, मुनिवर बड़भागी॥
इन्द्र वृंद नागिन्द्र, जासकी सेवा साजत।
जाही के परभाव, अमंगल ततखिन भाजत॥
चिंतामन सुरतरु ते धरैं, जो अनंत परभाव वर।
सो श्री जिन चरण-सरोज सौं, मो मन षट्पद[3] प्रीति कर॥८६॥

———

१. तीर्थंकरों के पाँच कल्याणक-गर्भ, जन्म, तप, ज्ञान और निर्वाण।

२. सौ इन्द्रों का समूह-भवनवासी देवों के ४०, व्यंतर देवों के ३२, कल्पवासी देवों के २४, ज्योतिषी देवों के १ चंद्रमा, १ सूर्य, मनुष्यों में १ चक्रवर्ती और तिर्यंचों (पशुओं) में १ सिंह। कुल १०० इन्द्र (प्रमुख) होते हैं।

३. भ्रमर=मन रूपी भौंरा।

Scanned by CamScanner

गीता प्रकरण सप्तक

रूपमाला (सम)

यह २४ मात्रा का होता है। इसके आदि में रगन और अंत में एक गुरु तथा लघु होता है। यति १४, १० पर—

पाय के नर जन्म प्राणी, वृथा मति हि गंवाव।
चेत चेत अचेत हो! मति, फिर न ऐसो दाव॥
जैन बैन अनूप अमृत-पान करि हरखाव।
आतमीक सुभाव निज-गुण रूप माला ध्याव॥८७॥

सुगीति (सम)

यह २५ मात्रा का होता है। रूपमाला के आदि में एक लघु देने से बनता है—

करै जबै विस्तार सौ निज, मुख अमित अगनीत।
धरै मुखों प्रति कोटि-कोटिक, जीभ प्रमद सहीत॥
रहै त्रिकाल विशाल जो, वृंदारपति हे मीत।
तबै कछु यह कह सकै, जिनदेव तुव जसु-गीत॥८८॥

गीता (सम)

यह २६ मात्रा का होता है। यति १४, १२ पर—

भविजीव हो, संसार है, दुख-खार-जल-दरयाव।
तसु पार उतरन को यहि, है एक सुगम उपाव॥
गुरु भक्ति को मल्लाह करि निज रूप सौं लव लाव।
जिनराज को गुन वृंद गीता यही गीता गाव॥८९॥

शुभ गीत (सम)

यह २७ मात्रा का होता है। यति १५, १२ पर—

जिनिंद को गिरिराज ऊपर, धारि हर्ष सहीत है।
सुरेश ने अभिषेक कीनो, जो सनातन रीत है॥
सची रचि सिंगार सौ छबि,कही न जात पुनीत है।
भरी दसों दिशि कामिनी,सुर गावती शुभ गीत है॥९०॥

Scanned by CamScanner

हरि गीति या हरि गीतिका (सम)

यह २८ मात्रा का होता है। यति १६, १२ पर। अन्त में लघु गुरु या समय आवश्यक है। इसकी गति ठीक रखने के लिए प्रत्येक चरण की पाँचवीं, बारहवीं, उन्नीसवीं और छब्बीसवीं मात्राओं को लघु रखना चाहिए—

गरभावतार समय जिनेसुर, मातु पर धरि प्रीति है।
सुर-कन्यका सेवा करें, जिहि भांति जिनकी रीति है॥
जननी लहै सुख वृंद सोई, करहिं सकल विनीति हैं।
करताल बीन मृदंग लै, गावें मनो हरिगीति हैं॥९१॥

सुगीतिका (सम)

यह २८ मात्रा का होता है। चारों चरणों के आदि में सगण (। ऽ)—

वृषभेश ब्याह उछाह घर-घर, होत अनंद बधावहीं।
धरनिंद इंद नरिंद चंद, सभी बराती आवहीं॥
जहँ होत मंगल मोद मंजुल, वृंद सब सुख पावहीं।
मन होत बस, जस सुनत मान सुगीति कामिनी गावहीं॥९२॥

शुद्ध गीता (सम)

यह २८ मात्रा का होता है। अन्त में दो गुरु वर्ण या मगण आवश्यक है—

सुनो संसार में आके, जिन्होंने काम जीता है।
सभी मिथ्यात को छोड़ा, गुरु बानी अधीता है॥
वही हैं धन्य हे भाई, बड़ाई काम की ता[1] है।
प्रभू की भक्ति में भीने, जु गावें शुद्ध गीता है॥९३॥

—: ० :—

१. 'ता'—यह

वर्णिक सवैया सप्तक

मदिरा (सम)

वर्ण २२, प्र० (७ भ०+१ गु०)—

काल अनादि वितीत भयौ, पगि पुग्गल सौं जिय प्रीति ठई।
लाख चुरासिय जोनिन मैं, दुख भोगतु है तिहि संगतई॥
श्री जिन बैन गहै न कभी, मनु ग्यायकता गुन गोई गई।
आप स्वरूप न जान सकै, जु पियौ **मदिरा** मद मोह मई॥९४॥

मत्त गयन्द (मालती) (सम)

वर्ण २३, प्र० (७ भ०+२ गु०)—

जन्म उछाह निवाह वियोग, निचारि हिये हरि हर्षित हो है।
आवत वृंद समाज सजें वह, औसर देखत ही मन मोहै॥
जाय सची जननी ढिगतैं, प्रभु लै कर सौंपति ही पति को है।
इंद्र जिनिंद्र को गोद धरें, चढें **मत्त गयंद** इरावत सौ है॥९५॥

द्रमिला या द्रुमिल (सम)

वर्ण २४, प्र० (८ सगण ।।ऽ)—

अपनी विरदावलि पालन को, तुव संकट काटि बहावहिंगे।
करुना निधिवान निवाहन को, कछु लाज हिये महँ लावहिंगे॥
सरनागत-वच्छल दीन-दयाल, तभी प्रभुजी कहिलावहिंगे।
मति सोच करो भविवृंद तुम्हैं, सुखकंद जिनंद्र **मिलावहिंगे**॥९६॥

भुजङ्ग (सम)

वर्ण २४, प्र० (८ यगण ।ऽऽ)—

कभी चेतना की निशानी न जानी, मनोज्ञान वानी नसानी दसा है।
तथा जैनवानी विजानी नहीं जो, सुनी भेदग्यानी कसोटी कसा है।
चहे काम भोगी मनोगी विषै भोग, भोगी विषै विष्य ही में धसा है।
जिते जग्त के जीव रासी निवासी तिन्हैं मोह आसी **भुजंगे** डसाहै॥१७॥

Scanned by CamScanner

किरीट (सम)

वर्ण २४, प्र० (८ भगण ऽ।।)—

गंध कुटी जुत श्री जिनकी, महिमा कहिवे कहं मो मन लाजत।
होत अनूपम रंग तहां जब, इंद्र नमै सिरनाय समाजत ।।
इंद्रनि की दुति श्री पति के पद,–कंज नखावलि में छबि छाजत।
श्री पति के नख की दुति–संजुत, इंद्रन सीस **किरीट** विराजत ।।९७।।

माधवी[1] (सम)

वर्ण २५, प्र० (८ सगण + १ गु०)

जहँ द्वादस जोजन गील शिला पर, ठाट रच्यौ निरवाधवी है जू ।।
उपमा तिहुँ लोक विषै न लसै, महिमा जल-राशि अगाधवी है जू ।।
निधि द्वार खरी कर जोर जहां, चित चिंतित, देत सु साधवी है जू ।।
जिन राज समोसृत साज तहां, द्रुमराजनि राजति माधवी है जू ।।९९।।

द्वितीय[2] माधवी (सम)

वर्ण २४, प्र० (७ सगन + १ यगन)

जहँ द्वादस जोजन गोल शिला पर, ठाट रच्यौ निरवाधवी है ।
उपमा तिहुँ लोक विषै न लसै, महिमा जल-राशि अगाधवी है ।।
निधि द्वार खरी कर जोर जहाँ, चित चिंतित देत सुसाधवी है ।
जिनराज समौसृत साज तहाँ, द्रुमराजनि राजति **माधवी** है ।।१००।।

———

१. सुन्दरी, मल्लीं, चन्द्रकला, सुखदानी भी इसे कहते हैं। 'माधवी है जू' आदि तुकों की 'वी' लघुन पढ़कर यदि गुरु पढ़ी जावे तो ७ सगन, १ यगन और १ गुरु होता है।

२. यह प्रथम माधवी का प्रकारान्तर है। उसका अंतिम वर्ण 'जू' यहां निकाल दिया गया और 'वी' को दीर्घ ही पढ़ना चाहिए।

Scanned by CamScanner

दण्डक प्रकरण

[जिस पद्य के प्रत्येक चरण में वर्णों की संख्या २६ या उससे अधिक होती है, उसे दण्डक छन्द कहते हैं। इसके दो भेद माने गए हैं—(१) गण बद्ध और (२) मुक्तक। जिन पद्यों के वर्णों की संख्या गणों के अनुसार होती है वे गणबद्ध और जिनके वर्णों की संख्या तो निश्चित होती है, लेकिन गणों का कोई नियम नहीं रहता है, वे मुक्तक, कहलाते[1] हैं]

दण्डक (सम)

विशेष–यह छन्द उपर्युक्त मान्यता के भीतर नहीं आसका।–

सीता अहार कीन्हों तयार, तब राम द्वार पैखैं उदार॥
ताही सुवार दो मुनि पधार, है तपागार आकाश[2] चार॥
बलि हर्ष धार जानकी लार, पूजे प्रचार आठौं प्रकार।
भरि भक्ति भार, तीनों अहार, कांतार चार **दण्डक** मंझार॥१०१

अशोक पुष्प मंजरी (सम)

वर्ण ३१; क्रम से एक गुरु एक लघु।–

केवली जिनेश की प्रभावना अचिंत मित,
कंज पै रहैं सु अंतरिच्छ पाद-कंज री।
मूष औ बिडाल मोर व्याल बैर टाल टाल,
हैं जहां सुमीत ह् वैं निचीत भीति भंज री॥
अंग-हीन अंग पाय, हर्ष सो कहा न जाय,
नैन-हीन नैन पाय मंजु कंज खंज री।
और प्रातिहार्य की कथा कहा कहै सु वृन्द,
शोक थोक को हरै **अशोक पुष्प मंजरी**॥१०२॥

अनङ्ग शेखर (सम)

वर्ण ३२; क्रम से एक लघु, एक गुरु।–

---

१. सरल पिंगल पृष्ठ ४६। २. आकाश गामी, चारण ऋद्धिधारी मुनि।

३. इस सवैये में कवि ने समौशरन, जिनेन्द्र के आसन और उनकी 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की महानता को बड़े ही मनोरम रूप में, चित्र रूप में, वर्णित किया है।

Scanned by CamScanner

जिनेंद्र के मुखार विंद सौं खिरैं त्रिकाल शब्द,
अब्द सी अनच्छरी अनिच्छिता धरै रहैं।
न होठ जीभ हाल ही न स्वेद-खेद चालही,
अलौकिकी अदोष घोष सौख सौं भरै रहैं॥
समस्त जीव बूझ ही असूझहू को सूझ ही,
मिथ्यात मोह भाव भव्यजीव सौं टरै रहैं॥
तिसी जिनंद चंद की सभा विषैं सुरिंद 'वृन्द',
ओर से चहूँ-दिसा **अनंग–से खरे** रहैं॥१०३॥

पुनश्च

त्रिलोक मैं त्रिकाल के जितेक वस्तु भेद हैं,
विशेष जुक्त सर्व जासु ज्ञान में धरै रहैं।
विलोकि श्री समौ विभूति भव्यजीव आय आय,
देखि देव की छबी अनंद सौं भरै रहैं॥
जिनेश के प्रभाव सौं कुभाव को अभाव होते,
रिद्धि सिद्धि वृद्धि सौं सवै हरे भरै रहैं।
सुरिंद औ नरिंद 'वृन्द' हाथ जोर जोर के,
सु ओर से चहूँ दिसा **अनंग-से-खरे** रहैं॥१०४॥

जल–हरन (सम)

वर्ण २६ (सर्व लघु)

किसी-किसी ने इसे ३२ वर्णों का भी माना है।–

सुनहु अरज शिवतियवर जिनवर, अनुपम गुन-गन-धन धरन।
नुव पद-कमल अमल-रस सुरनर, मुनि-मन-मधुरक वश करन॥
प्रभु जस विदित विशद अस सुनि अति, दुरित दरन सब सुख भरन।
भविक शरन गह कहत चहत नित, समरथ भव-दधि-जल-हरन॥१०४

मन हरन (सम)

वर्ण ३१, यति–१६; १५ पर; गुरु–लघुका कोई नियम नहीं—

चारौं घाति **कर्म** को विनाशि के विशुद्ध भयो,
शुद्ध गुन रतन भरौं करंडवत है।

Scanned by CamScanner

जाके ज्ञान गुन के अनंतवें विभाग मांही,
लोकालोक 'वृन्द', झलकै अखंडवत है ॥
भव दुख उदधि अपार पार तारिवे को,
वही जिनचंद देव हो तरंडवत है ।
ऐसे अरहंत नित मंगल करन अघ-
हरन तिन्हैं हमारी सदा दंडवत है ॥१०६॥

कविवर का परिचय

दण्डक

आकास शीवजी है मैंल वृन्दवाह्वसु नसि,
    अत्युम्र अवाग्र लसो गोत्रई गुन हो ।
बल जमोऽनंत बुध शर्म प्रचंड दश,
    काम बेग टारि शीलता सुब्रोग्रमा गुन हो ॥
नंता सुलाभ लये जो के कात्या ना हेलो ऐसो,
    हे तात राखि मुझे काल पतन सुव हो ।
युति कीजैवानी स्वादि सुगंध मई रिद्धि रुलै,
    कभी महा नरका दोप तलिहु न हो ॥१०७॥

उपर्युक्त छन्द से कविवर का वंश-परम्परा पूर्ण परिचय निकलता है जिसके निकालने की रीति उन्होंने इस प्रकार बताई है—

या कविता के बरन महँ, एक छांडि इक लेहु ।
तजि तुकान्त के तीन तब कवि-कुलादि कहि देहु ॥१०८॥

अर्थात् उस छन्द में चारों के तुकान्त के तीन-तीन वर्णों को छोड़कर शेष वर्णों में प्रारम्भ से, एक छोड़कर एक वर्ण ग्रहण करने से **"काशीजी में वृंदावन अग्रवाल गोइल गत धर्मचंद का बेटा, शीताबो माता, लालजी का नाती, सीता रामु का पनती जैनी दिगमरी एकमन का पति"** इस प्रकार कवि के कुल का परिचय प्राप्त होता है। मालूम है उस समय कविवर किसी मौज या क्षन में आनन्दित होकर कुछ हास्यानंद प्राप्त करना चाहते थे, जिस समय उक्त छंद लिखा गया था। छन्द बड़े परिश्रम से बनाया गया है क्योंकि वह अपने आपमें एक आध्यात्मिक अर्थ भी रखता है।

Scanned by CamScanner

बुद्धिमानों से प्रार्थना—

विजय

पिंड गुरु लघु को जिहिं तें बंधै, पिंगल नाम वही परमानो।
जामैं गनागन नष्ट उदिष्ट रु, मेरु को आदिक भेद विधानो ॥
सो तो कछु इत भाषत नाहिं, इहाँ तो जिनिंद को नाम बखानो।
तामैं लग्यौ कहूँ दूषण होय सो, शोधि सुधारियो हे बुधिवानो ॥१०९॥

अन्तिम मंगलाचरण—

दोहा

मंगल मूरति देव हैं, श्री अरहंत उदार।
सो इत नित मंगल करौ, मेटो विघन विकार ॥११०॥
जिनके धर्म प्रसाद सौ, भई प्रतिग्या सिद्धि।
सो जिनचंद हमैं करौ, सुख सागर की वृद्धि ॥१११॥
जयवंतो वरतो सदा, जैन धर्म दुख हर्न।
वृंदावन को हूजियौ, मंगल उत्तम शर्न ॥११२॥
यथा पाठ नव को रहत, सब थल नव परमान।
तथा जैन को छंद यह, वरतो सुखद निधान ॥११३॥
जोलौं रवि-शशि गगन महँ, उदै अमंद धराय।
तोलौं यह रचना रहौ, निरमल जस सुखदाय ॥११४॥
अजितदास निज सुअन के, पठन हेत अभिनंद।
श्री जिनिंद सुखकंद कौ, रच्यौ छंद यह वृंद ॥११५॥
पौष कृष्ण चौदस सुदिन, ता दिन कियौ अरम्भ।
अट्ठारह दिन मैं भयौ, पूरन शब्द ब्रह्म ॥११६॥
जो यह छंद जिनिंद कौ, पढ़ैं पढ़ावै जीव।
सो मन वांछित पाय सुख, अनुक्रम ह्वै शिवपीव ॥११७॥
अट्टारह सो ठानवै, संवत विक्रम भूप।
दोज माघ कलि कों भयौ, पूरन छन्द अनूप ॥११८॥

इति श्रीवृंदावन कृत जैन छंदावली सम्पूर्णा[1]

---

१. संवत १९९८ माघ बदी दोयज शनिवार को यह पोथी बृन्दावन ने लिखी सो जयवंत रहो। कवि वृन्दावन।

परिशिष्ट

इस छन्द शतक में कविवर वृन्दावन जी के द्वारा सौ छन्दों का वर्णन किया गया है। छन्दों के इस शतक के अतिरिक्त और भी अनेक स्तुति और पूजाओं में अनेक छन्दों का प्रयोग देखा जाता है। जिनमें से कुछ छन्द यहां दिए जा रहे हैं।

१. रामकली छंद—उदाहरण–ऋषभदेव ऋषिदेव सहाई।
अजित अजितरिपु संभव-संभव, अभिनंदन नंदन लवलाई।
ऋषभदेव ऋषिदेव सहाई ।।१।।

२. राग भैरों छंद—उदाहरण–उठो रे सुज्ञानी जीव जिनगुण गावो रे।
निशि तो नशाय गई, भानु को उद्योग भयो, ध्यान को लगाओ प्यारे,
नींद को भगावो रे ।।उठो रे०।।

३. राग बसंत—भोर भयो भज श्री जिनराज।
सफल होहिं तोरे सब काज ।।

४. राग भैरों—भोर भयो सब भविजन मिलकर, जिनवर पूजन आवो।
अशुभ मिटाओ, पुण्य बढ़ावो, नैनन नींद गमावो ।।भोर०।।

५. कवित्त छंद—वीर हिमाचल तें निकसी, गुरु गौतम के मुख कुंड ढरी है।

६. चाल खड़ी—मनवचतन कर शुद्ध पंच पद, पूजो भविजन सुखदाई।

७. सुन्दरी छंद—कनकमणिमय कुंभ सुहावने।

८. छंद (१६ मात्रा)—जय जिनंद सुखकंद नमस्ते।

९. वास्तु छंद—जैनवानी जैनवाणी सुनहिं जे जीव।

१०. सवैया—मिथ्यातम नाशवे को, ज्ञान के प्रकाशवे·····।

११. राग भरतरी—दोहा–ते गुरु मेरे उर बसो।

१२. शेर—जैवंत दयावंत सुगुरु देव हमारे।

१३. वस्तु छंद—मेघमाली मेघमाली आप बल फोरि।
भेज तुरत पिशाचिगण, नाथ पास उपसर्ग कारण। अग्नि·····
कालरूप विकराल तन, मुंडमाल झलकंत। है निशंक·····

१४. दोधकांतबेसरी छंद (षट्पद)—इहविध श्रीभगवंत, सुजस जे भविजन भाषहिं।
(चार लाइन बाद) दोहा—यह कल्याण मंदिर कियो·····।

Scanned by CamScanner

१५. रुचिरा छंद ३० मात्रा)—केतकि कंज गुलाब जुही वर, सुमन सुवासित मनहारी। (बीस तीर्थंकर पूजा, जिनवाणी)

१६. नंदीश्वर चाल—नंदीश्वर श्रीजिनधाम बावन पुंज करों।
वसुदिन प्रतिमा अभिराम आनंद भाव धरों॥

१७. रूपक सवैया छद (३१ मात्रा)—शांतिनाथ जिनके पद पंकज,
जो भवि पूजें मनवचकाय।

१८. छंद चाल (चाल छंद)—शुभ प्राणत स्वर्ग विहाये।

१९. चौपाई आचलीं बद्ध (१५ मात्रा)—शीतल मिष्ट सुवास मिलाय,
जल सों पूजों श्रीजिनराय
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय।

२०. वेसरी छंद—उत्तम दिमा जहाँ मन होई।

२१. कुसुमलता छंद—विमलनाथ भगवान् जहाँ पंचमगति पाई।

२२. ढाल कातिक छंद—प्राणी हो आदीश्वर महाराज जी……।

२३. लोलतरंग छंद—मनमोहन तीरथ शुभ जानो।

२४. पाइता छंद—कार्तिक सुदि की छठ जानो।

२५. तेईसा छंद—श्री जिनराज गरीब निवान, सुधारन काज सबै सुखदाई।

२६. कवित्त छंद (३१ मात्रिक)—पंचम गुणथानक जो श्रावक, उत्कृष्टी
प्रतिमाधर होय।

२७. विष्णुपद छंद—कहां गए चक्री जिन जीता भरतखंड सारा।
कहां गए वे रामरु लक्ष्मण जिन रावण मारा॥

२८. अरिहंत पूजा मराठी की चाल—
पूजों-पूजों श्री अरिहंत देवा, ज्यांची शत इन्द्र करितां सेवा।
आहे पुण्या धर्माचा ठेवा, जिनेन्द्र पाय पूजामि भावकरीन॥
जिनेन्द्र पाय……

———

Scanned by CamScanner

जिनवाणी स्तुति

—कु० माधुरी शास्त्री

हे सरस्वती माता, अज्ञान दूर कर दो।
जग को देकर साता, विज्ञान पूर भर दो ।।

श्रुत का भण्डार भरा, तेरे ज्ञान की गंगा में।
जन मन शृंगार करा, गुरुवर मुनि चन्दा ने ।।

शृंगार सहित माता, श्रुतज्ञान पूर्ण कर दो।
जग को देकर साता, विज्ञान पूर भर दो ।। हे सरस्वती० (१)

प्रभु वीर की वाणी सुन गणधर ने संवारा है।
मुनिगण उस पथ पर चल निजज्ञान सुधारा है ।।

निज ज्ञान किरण दाता, आलोक ज्ञान भर दो।
जग को देकर साता, विज्ञान पूर भर दो ।। हे सरस्वती० (२)

चन्दन चन्दा गंगा तन शीतल कर सकते।
मुक्ता मालायें भी नहि मन को हर सकते ।।

मन शान्त सुरभि दाता, शारद माँ का वर दो।
जग को देकर साता, विज्ञान पूर भर दो ।। हे सरस्वती० (३)

मुद्रक : भारतीय प्रेस, ३०० स्वामीपाड़ा, मेरठ–२५०००२

Scanned by CamScanner

पू० आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी द्वारा लिखित

एवं संस्थान द्वारा प्रकाशित उपलब्ध अन्य पुस्तकें

	मूल्य
१. बाल विकास भाग १	१–००
२. बाल विकास भाग २	२–००
३. बाल विकास भाग ३	३–००
४. बाल विकास भाग ४	४–०
५. धरती के देवता	१–०५
६. इन्द्रध्वज विधान	२५–००
७. ऋषिमण्डल पूजा विधान	३–००
८. सुदर्शन मेरु पूजा	०–५०
९. सोलह भावना	१०–००
१०. दिगम्बर मुनि	१५–००
११. ज्ञान ज्योति गाइड	१–००
१२. Jamboodeep & Hastinapur	0–50
१३. जिनगुण संपत्ति विधान	३–००
१४. नियमसार (हिन्दी टीका)	३५–००
१५. Jain Geography	15–00
१६. Compassion	1–50
१७. जम्बूद्वीप पूजा	१–००
१८. हस्तिनापुर पूजा	१–००
१९. कुंदकुंद का भक्तिराग	१०–००
२०. आर्यिका रत्नमती	६–००
२१. सुमेरु वंदना	०–५०
२२. महावीराचार्य	१०–००
२३. भरतबाहुबली चित्रकथा (अंग्रेजी)	१–५०
२४. Philosopher Mathematicians	10–00
Philosopher ,, (Library Edition)	15–00

	मूल्य
२५. नियमसारप्राभृत (संस्कृत हिन्दी टीका सहित)	७०–००
२६. रत्नमती अभिनंदन ग्रन्थ	५१–००
२७. कल्पद्रुम विधान	२५–००
२८. जम्बूद्वीप मंडल विधान	१५–००
२९. व्रत-विधि एवं पूजा	२–००
३०. सती अंजना	४–००
३१. प्रतिज्ञा	३–५०
३२. परीक्षा	३–५०
३३. हस्तिनापुर परिचय	१–००
३४. अभिषेक पूजा	४–००
३५. मण्डल विधान एवं हवन विधि	८–००
३६. सामायिक	१–००
३७. सर्वतोभद्र विधान	४०–००
३८. तीनलोक विधान	२५–००
३९ त्रैलोक्य विधान	१६–००
४०. तीस चौबीसी विधान	१६–००
४१. पंचमेरु विधान	४–००
४२. जम्बूद्वीप पूजांजलि (जिनवाणी संग्रह)	२५–००
४३. रोहिणी नाटक	३–००
४४. गोमटसार जीवकांडसार	८–००
४५. भाव त्रिभंगी	५–००
४६. बाल विज्ञान ज्योति	४–००
४७. परमात्म प्रकाश	१६–००

मुद्रक : भारतीय प्रेस, निकट आर्यसमाज मन्दिर, स्वामीपाड़ा, मेरठ।

Scanned by CamScanner